न्यायालय कामर्शियल कोर्ट नं०-2, लखनऊ।
Arbitration Execution Case No.-94/2020
UPLK190001272020

Suresh Kumar Mishra
V/S
Sanjay Gupta And Others

दिनांक-16.05.2025

1. पत्रावली पेश हुई। उभयपक्ष के विद्वान अधिवक्तागण को पूर्व में प्रार्थना पत्र सी-81, आपत्ति सी-83 व प्रतिआपत्ति सी-85 तथा प्रार्थना पत्र सी-88, आपत्ति सी-92 व प्रतिआपत्ति सी-95 पर सुना जा चुका है। पत्रावली आज आदेश हेतु नियत है।

2. निर्णीत ऋणी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रार्थना पत्र सी-81 मय शपथ पत्र सी-82 संपूर्ण निष्पादन कार्यवाही को खारिज करने के साथ-साथ डिक्रीदार के पक्ष में अवैध रूप से दी गई अचल संपत्तियों की बहाली के लिए प्रस्तुत करते हुए यह कथन किया गया है कि श्री सुरेश कुमार मिश्रा दिनांक 12.01.2007 के एवार्ड को लागू करने की मांग कर रहे हैं, जिसमें विपक्षी ने एवार्ड पर स्टाम्प ड्यूटी के भुगतान के संबंध में विशिष्ट आपत्तियां उठाई हैं और वर्तमान संदर्भ के लिए प्रकीर्ण वाद संख्या 27/2018 में श्री सुरेश कुमार मिश्रा द्वारा दावाकृत मूल अनुतोष को नीचे दिए गए रूप में पुन: प्रस्तुत किया गया है:

"इसलिए उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए यह न्यायालय दिनांक 12.01.2007 के एवार्ड और डिक्री के निष्पादन की अनुमति देने और विपक्षीगण के मालिकों को 82,85,215.90 रुपये (15.07.2017 तक देय) का भुगतान करने का निर्देश देने की कृपा करे। ऐसे दिन और समय के भीतर जिसे न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाएगा, जिसके न होने पर अवध टॉवर में विपक्षी पक्षकारों के स्वामियों के हिस्से में आने वाले भवन के हिस्से को कुर्क किया जा सकेगा और विपक्षीगण द्वारा प्राप्त किए जा रहे किराये को भी कुर्क किया जा सकेगा जिसे डिक्रीदार को देय बनाया जाएगा और फिर भी यदि वह कम पड़ता है तो विपक्षीगण के हिस्से में आने वाली कुर्क की गई संपत्ति का हिस्सा बेचा जा सकेगा और उसकी बिक्री से प्राप्त राशि सिविल प्रक्रिया संहिता-1908 के आदेश-XXI, नियम-36 के तहत डिक्रीदार को भुगतान की जाएगी। उपरोक्त मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर न्यायालय द्वारा उचित और उचित समझे जाने वाले अन्य आदेश या आदेश, निर्णीत ऋणीगण के विरुद्ध डिक्री धारकों के पक्ष में पारित किए जा सकते हैं। तत्पश्चात इस अनुतोष को दिनांक 07.07.2018 के संशोधन आवेदन के माध्यम से संशोधित किया गया और श्री सुरेश कुमार मिश्रा द्वारा आपत्तिकर्ताओं से निम्नलिखित दुकानों को कब्जे में लेने की मांग की गई, जिनमें से पांच दुकानों का विवरण इस प्रकार है:

i) अवध टॉवर के उत्तरी ब्लॉक में स्थित डिक्रीदार से संबंधित प्रथम तल के सामने की ओर का शेष 1/3 भाग, जो लगभग 1000 वर्ग फीट है।

उपरोक्त 1/3 भाग की सीमाएं

पूर्व- डिक्रीदार का शेष भाग (एस.के.मिश्रा)

पश्चिम: के संस लेन

उत्तर: आलोक गुप्ता और केनरा बैंक की संपत्ति

दक्षिण: 1. डेंटल यूनिवर्सिटी का गोदाम

2. श्री आयुर्वेद कार्यालय श्री वित्तीय सेवाएं आयुर्वेद प्रभाग का कार्यालय।

ii) दुकान संख्या यूजी-2, 10' x 20' और यूजी-3, 10' x 20' जो कि डिक्री होल्डर की 20' x 20' वर्ग फीट की एक दुकान के रूप में बनाई गई है, जो उत्तरी ब्लॉक, ऊपरी भूतल के सामने वाले हिस्से में स्थित है।

दुकान संख्या यूजी-2 और यूजी-3 की सीमाएँ

पूर्व- ग्लोबेक्स इंटरनेशनल एक्सप्रेस एवं लॉजिस्टिक सर्विसेज दुकान नं. यूजी-30 में

पश्चिम: के संस लेन

उत्तर: पैसेज और दुकान नंबर यूजी-1 और यूजी-29

दक्षिण: श्री आयुर्वेद कार्यालय, श्री फाइनेंशियल सर्विसेज आयुर्वेद प्रभाग का कार्यालय।

iii) उत्तरी ब्लॉक, ऊपरी भूतल के सामने वाले हिस्से में स्थित डिक्रीदार की दुकान संख्या यूजी-1 और यूजी-29, प्रत्येक 8' x 10' वर्ग फुट।

दुकान संख्या यूजी-1 और यूजी-29 की सीमाएँ

पूर्व-दुकान नंबर 27 (डिक्रीदार एस.के. मिश्रा के कब्जे में)

पश्चिम: के संस लेन

उत्तर: आलोक गुप्ता और केनरा बैंक की संपत्ति

दक्षिण: पैसेज और दुकान नंबर यूजी-2 और यूजी-3

iv) उत्तरी ब्लॉक, ऊपरी भूतल के सामने वाले हिस्से में स्थित डिक्री होल्डर की दुकान संख्या यूजी-30, जिसका क्षेत्रफल 10' x 20' वर्ग फुट है, तथा जिसका क्षेत्रफल 200 वर्ग फुट है।

दुकान संख्या यूजी-30 की सीमाएं

पूर्व- स्मार्ट यात्रा ट्रैवल्स दुकान No.UG-28 में

पश्चिम: दुकान नंबर यूजी-2 और यूजी-3 में कोचिंग संस्थान

उत्तर: दुकान नं. यूजी-27 (डिक्रीदार एस.के. मिश्रा के कब्जे में)

दक्षिण: यूनिवर्सल डेंटल की दुकान।

v) डिक्रीदार का दुकान संख्या यूजी-28, 10' x 20 वर्ग फीट, उत्तरी ब्लॉक, ऊपरी भूतल के सामने वाले भाग में स्थित है तथा जिसका क्षेत्रफल 200 वर्ग फुट है।

दुकान संख्या यूजी-28 की सीमाएं

पूर्व- Total Solutions Shri Kalindi का कार्यालय।

पश्चिम: ग्लोबेक्स इंटरनेशनल और लॉजिस्टिक सर्विसेज, दुकान संख्या UG-30

उत्तर: उत्तरी ब्लॉक का मार्ग और सीढ़ियाँ

दक्षिण: बायो-मेड कंसोर्टियम का कार्यालय

उपरोक्त के अलावा डिक्रीदार ने अपने आवेदन दिनांक 08.04.2024 के माध्यम से 15.03.2024 की अवधि तक 1,24,03,963.40 रुपये की राशि के लिए भी याचना की है। दिनांक 01.03.2024 के आदेश के तहत इस न्यायालय ने डिक्रीदार के पक्ष में आदेश के रूप में कब्जे का वारंट जारी करने की आदेश पारित किया है और 20.03.2024 को उपरोक्त वारंट के अनुसरण में डिक्रीदार को निर्णीत ऋणीगण से संबंधित अचल संपत्तियों पर कब्जा दे दिया गया है। इस स्तर पर यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि आदेश के रूप में उपरोक्त वारंट तथा सम्पूर्ण

निष्पादन कार्यवाही डिक्रीदार की ओर से कपट से दूषित है, जिसने अत्यंत शरारती, दुर्भावनापूर्ण और कपटपूर्ण तरीके से इस तथ्य को छिपाया है कि दिनांक 12.01.2007 का माध्यस्थम एवार्ड जो अन्यथा पंजीकरण अधिनियम-1908 की धारा-17 (1) खंड-(बी) के दृष्टिगत एक अनिवार्य रूप से पंजीकृत साधन है, कभी भी विधिवत पंजीकृत नहीं किया गया है, इस प्रकार कानून की नजर में अवैध है और इस पर कभी भी इस माननीय न्यायालय द्वारा साक्ष्य के रूप में विचार नहीं किया जा सकता था और न ही माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा-36 के अनुसार निष्पादित किया जा सकता था। वर्तमान संदर्भ हेतु पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 17 के अंतर्गत निहित प्रावधानों को निम्नानुसार पुन: उद्धृत किया जा रहा है: -

17. Documents of which registration is compulsory-

(1) The following documents shall be registered, if the property to which they relate is situate in a district in which, and if they have been executed on or after the date on which, Act No. XVI of 1864, or the Indian Registration Act, 1866, or the Indian Registration Act, 1871, or the Indian Registration Act, 1877, or this Act came or comes into force, namely:-

(a) instruments of gift of immovable property;

(b) other non-testamentary instruments which purport or operate to create, declare, assign, limit or extinguish, whether in present or in future, any right, title or interest, whether vested or contingent, of the value of one hundred rupees and upwards, to or in immovable property;

(c) non-testamentary instruments which acknowledge the receipt or payment of any consideration on account of the creation, declaration, assignment, limitation or extinction of any such right, title or interest; and

(d) leases of immovable property from year to year, or for any term exceeding one year, or reserving a yearly rent;

1 [(e) non-testamentary instruments transferring or assigning any decree or order of a Court or any award when such decree or order or award purports or operates to create, declare, assign, limit or extinguish, whether in present or in future, any right, title or interest, whether vested or contingent, of the value of one hundred rupees and upwards, to or in immovable property:]

Provided that the 2 [State Government] may, by order published in the 3 [Official Gazette), exempt from the operation of this sub-section any lease executed in any district, or part of a district, the terms granted by which do not exceed five years and the annual rents reserved by which do not exceed fifty rupees.

पंजीकरण अधिनियम-1908 की धारा-17 (1) खंड-(बी) के अनुसार दिनांक 12.01.2007 का माध्यस्थम एवार्ड, अचल संपत्ति में या उस पर एक सौ रुपये या उससे अधिक मूल्य के पक्षों के बीच अधिकारों, स्वत्वों और हितों को बनाने, घोषित करने, सीमा निर्धारित करने और समाप्त करने के लिए संचालित होता है। इसलिए, इसे रजिस्टर में दर्ज न करवाने पर एवार्ड को अमान्य कर दिया गया है और इस तरह एवार्ड को किसी भी स्तर पर साक्ष्य के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है और निष्पादन कार्यवाही आगे नहीं बढ़ सकती है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि मध्यस्थ द्वारा पारित माध्यस्थम एवार्ड भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 के साथ-साथ पंजीकरण अधिनियम, 1908 दोनों के अनुसार एक साधन है, इसलिए विधानमंडल ने 1929 के अधिनियम 21 के तहत धारा-10 के द्वारा संशोधन के माध्यम से पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा-17(2) खंड-(vi) के तहत प्रदान किए गए बहिष्करण की श्रेणी से "और किसी भी एवार्ड" शब्द को स्पष्ट रूप से हटा दिया है। अनिवार्य रूप से पंजीकृत करने

योग्य दस्तावेज़/उपकरण के गैर-पंजीकरण के प्रभावों को पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा-49 के तहत प्रदान किया गया है, जो सबसे स्पष्ट और स्पष्ट शब्दों में बताता है कि, ऐसे दस्तावेज़ जो अधिनियम की धारा 17 के तहत प्रदान किए गए हैं यदि विधिवत पंजीकृत नहीं हैं, तो वे किसी भी अचल संपत्ति को प्रभावित करेंगे। इसमें शामिल संपत्तियों को किसी भी लेनदेन के साक्ष्य के रूप में प्राप्त नहीं किया जा सकता है या ऐसी अचल संपत्ति को प्रभावित करने या ऐसी शक्तियां प्रदान करने के लिए प्राप्त नहीं किया जा सकता है, जब तक कि इसे पंजीकृत नहीं किया गया हो। वर्तमान संदर्भ के लिए पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा-49 के तहत निहित प्रावधानों को इस प्रकार उद्धृत जाता है-

49. Effect of non-registration of documents required to be registered - No document required by section 17 1 [or by any provision of the Transfer of Property Act, 1882 (4 of 1882)], to be registered shall -

(a) affect any immovable property comprised therein, or

(b) confer any power to adopt, or

(c) be received as evidence of any transaction affecting such property or conferring such power, unless it has been registered:

1 [Provided that an unregistered document affecting immovable property and required by this Act or the Transfer of Property Act, 1882 (4 of 1882), to be registered may be received as evidence of a contract in a suit for specific performance under Chapter II of the Specific Relief Act, 1877 (3 of 1877) 2, 3*** or as evidence of any collateral transaction not required to be effected by registered instrument.]

यह एक सामान्य कानून है कि अनिवार्य रूप से पंजीकृत किए जाने योग्य दस्तावेज को पंजीकृत न कराने पर वह दस्तावेज अवैध हो जाएगा और वह डिक्रीदार के पक्ष में कोई कानूनी अधिकार, हक या हित सृजित करने में असमर्थ होगा। एवार्ड का पंजीकरण न होना मात्र प्रक्रियागत दोष नहीं है, बल्कि वास्तव में यह एक औपचारिक दोष है जो मामले की जड़ तक जाता है। इसलिए, पंजीकरण अधिनियम-1908 की धारा-17 (1) खंड-(बी) के अनुसार एवार्ड पर अपेक्षित स्टाम्प शुल्क का भुगतान न करने और एवार्ड को पंजीकृत न करवाने के कारण ये कार्यवाही दोषपूर्ण हो गई है। यह निर्विवाद है कि दिनांक 12.01.2007 का एवार्ड, निर्णीत ऋणी के पक्ष में निहित अधिकार, स्वत्व और हित का सृजन, घोषणा और समनुदेशित करता है तथा निर्णीत ऋणीगण के विरुद्ध उसे समाप्त करता है, जो इस तिथि तक माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा-37 के अंतर्गत माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है। इसके अलावा, यह भी सामान्य कानून है कि न्यायालय द्वारा पारित डिक्री तथा मध्यस्थ द्वारा सुनाए गए माध्यस्थम एवार्ड को कभी भी पृथक रूप से नहीं पढ़ा जा सकता तथा साक्ष्य के रूप में नहीं लिया जा सकता, इस प्रकार दिनांक 12.01.2007 का एवार्ड, हालांकि चल तथा अचल दोनों प्रकार की संपत्तियों के संबंध में अधिकार, स्वत्व तथा हित का सृजन करता है, उसे पृथक रूप से नहीं पढ़ा जा सकता तथा एक बार जब अभिलेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपरोक्त एवार्ड पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा-17 के दृष्टिगत अपंजीकृत किन्तु अनिवार्य रूप से पंजीकृत करने योग्य दस्तावेज है, तो इसे न तो साक्ष्य के रूप में पढ़ा जा सकता है, न ही इस पर कार्रवाई की जा सकती है। किसी भी परिस्थिति में पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा-49 के तहत निहित प्रतिबंध के सख्त नियमों के तहत माननीय न्यायालय में प्रस्तुत किया जा सकेगा। इसलिए जब उपलब्ध अभिलेखों से यह स्पष्ट हो जाता है कि एवार्ड कभी पंजीकृत नहीं हुआ है, तो अचल संपत्ति की प्रकृति में या धन सम्बन्धी डिक्री की प्रकृति में दिया गया कोई भी अनुतोष इस न्यायालय द्वारा डिक्रीदार के पक्ष में कभी नहीं

दिया जा सकता था। इसलिए न्यायहित में यह न केवल अनिवार्य है, बल्कि इस न्यायालय का कर्तव्य भी है कि वह बिना किसी वैध अधिकार के डिक्रीदार को कब्जा में दी गई कीमती अचल संपत्तियों के निर्णीत ऋणीगण को वापस दिलाए। उपर्युक्त के दृष्टिगत वर्तमान कार्यवाही दोषपूर्ण है और आगे नहीं बढ़ सकती। इसके अलावा, जिन निर्णीत ऋणीगण को गलत तरीके से और अवैध रूप से उनकी संपत्तियों के कब्जे से बाहर कर दिया गया है, वे कानूनी रूप से उन्हें वापस पाने और उनके सही कब्जे में वापस पाने के अधिकारी हैं। अतः, ऊपर वर्णित तथ्यों, कारणों और परिस्थितियों को देखते हुए, निर्णीत ऋणी वर्तमान आवेदन को डिक्रीदार के खिलाफ हर्जा सहित अनुमति दी जानी चाहिए, न्यायहित में, निष्पादन वाद संख्या 94/2020 (सुरेश कुमार मिश्रा बनाम संजय गुप्ता एवं अन्य) की कार्यवाही को खारिज करने के साथ-साथ निर्णीत ऋणीगण को उन अचल संपत्तियों पर पुनः कब्ज़ा दिलाकर उन्हें पुनः स्थापित करना जो गलत तरीके से और अवैध रूप से इस न्यायालय द्वारा दिनांक 01.03.2024 के आदेश के माध्यम से डिक्रीदार के पक्ष में दी गई हैं।

3. डिक्रीदार के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रार्थना पत्र सी-81 के विरुद्ध आपत्ति सी-83 प्रस्तुत करते हुए यह कथन किया गया है कि निर्णीत ऋणीगण की ओर से दाखिल आवेदन (जिसे आगे उक्त आवेदन के रूप में संदर्भित किया गया है) पूरी तरह से तुच्छ, विद्वेषपूर्ण, दुर्भावनापूर्ण, कानून की प्रक्रिया और न्यायालय का दुरुपयोग करने के अलावा कुछ भी नहीं है, इसलिए बनाए रखने योग्य नहीं है, इसलिए भारी हर्जे के साथ खारिज किए जाने का याचना की गई है। यह अभिकथित किया गया है कि इसके अलावा वर्तमान आवेदन माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद द्वारा प्रकीर्ण एकल वाद 18205/2020 में पारित दिनांक 22.10.2020 के आदेश और अनुच्छेद 227 संख्या 2511/2023 के तहत मामले में पारित दिनांक 05.07.2023 के आदेश की पूरी तरह से अवहेलना करते हुए प्रस्तुत किया गया है। निर्णीत ऋणीगण द्वारा अपनाया गया आचरण और रवैया आपराधिक अवमानना के दायरे में आता है जिसके लिए उनके खिलाफ आवश्यक कार्रवाई की जानी चाहिए। कुछ आवश्यक और प्रासंगिक तथ्य (जिससे यह स्पष्ट है कि निर्णीत ऋणी अप्रत्यक्ष उद्देश्य और दुर्भावनापूर्ण इरादे से कानून और न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग कर रहे हैं) और जानबूझकर लगभग 17 साल पहले दिए गए और घोषित एवार्ड के फल को प्राप्त करने से डिक्रीदार को वंचित कर रहे हैं, नीचे संक्षेप में दिए गए हैं। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के माननीय पूर्व न्यायाधीश ने एकल मध्यस्थ के रूप में 12.01.2007 को एवार्ड पारित कर उसे घोषित किया था, जिसके विरुद्ध निर्णीत ऋणीगण द्वारा एवार्ड को अपास्त करने के लिए दायर याचिका को 25.07.2012 को खारिज कर दिया गया था और उसके बाद उसी आदेश के विरुद्ध दायर अपील को भी माननीय उच्च न्यायालय द्वारा 30.01.2017 को खारिज कर दिया गया था। माननीय उच्च न्यायालय में निर्णीत ऋणीगण द्वारा दायर अपील खारिज होने के बाद डिक्रीदार के पास कोई विकल्प न होने के कारण वर्तमान निष्पादन वाद दायर किया गया है, क्योंकि वे एवार्ड का पालन और कार्यान्वयन नहीं करने पर अड़े हुए थे। हालाँकि निर्णीत ऋणीगण ने एक बहाने से दूसरे बहाने पर परोक्ष उद्देश्य और दुर्भावनापूर्ण इरादे से स्थगन प्राप्त किया और विद्वान निष्पादन न्यायालय को एवार्ड को लागू करने की अनुमति नहीं दी, डिक्रीदार ने एक याचिका माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष शीघ्र निस्तारण हेतु प्रस्तुत किया। माननीय उच्च न्यायालय ने दिनांक 22.10.2020 के आदेश के तहत याचिका का अंतिम रूप से इस टिप्पणी के साथ निपटारा किया है कि निष्पादन न्यायालय कार्यवाही में तेजी लाने का प्रयास करेगा। दिनांक 22.10.2020 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक ए.1 के रूप में दाखिल की जा रही है। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के बाद वर्तमान वाद की कार्यवाही में तेजी आई और स्टाम्प की कमी के संबंध में मुंसरिम द्वारा उठाई गई आपत्ति को इस न्यायालय ने दिनांक 03.12.2020 के आदेश के तहत खारिज कर दिया, जिसकी सत्य प्रतिलिपि संलग्नक ए2 के रूप में संलग्न है और इसके अनुसरण में एवार्ड की प्रमाणित प्रति भी दाखिल की गई है। दिनांक 02.09.2021 को

निर्णीत ऋणीगण की ओर से एक आवेदन (सी-28) स्वीकार्य एवार्ड के अभाव तथा स्टाम्प की कमी के कारण निष्पादन वाद को खारिज करने के लिए दायर किया गया था तथा उक्त आवेदन के आधार पर कार्यवाही लगभग 13 महीने के लिए स्थगित कर दी गई थी। अंततः इस न्यायालय ने दिनांक 17.10.2022 को उक्त आवेदन को इस निर्देश के साथ खारिज कर दिया कि निर्णीत ऋणीगण को 15 दिनों के भीतर एवार्ड की पूरी राशि का भुगतान करना होगा अन्यथा वसूली की प्रक्रिया शुरू की जाएगी। दिनांक 17.10.2022 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A3 के रूप में दाखिल की जा रही है। दिनांक 17.10.2022 के आदेश का अनुपालन करने के बजाय, निर्णीत ऋणीगण की ओर से उक्त आदेश के विरुद्ध अपील दायर करने के लिए 15 दिन का समय मांगा गया, जिसे स्वीकार कर लिया गया तथा दिनांक 06.12.2022 के आदेश के तहत मामले को 18.12.2022 तक स्थगित कर दिया गया तथा उन्हें निर्देश दिया गया कि या तो वे पूरी राशि का भुगतान करें या माननीय उच्च न्यायालय का स्थगन आदेश दाखिल करें। माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 06.12.2022 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A4 के रूप में संलग्न है। स्पष्ट, श्रेणीबद्ध एवं विशिष्ट आदेश दिनांक 06.12.2022 के बावजूद न तो निर्णीत ऋणीगण ने माननीय उच्च न्यायालय से कोई आदेश लाया है और न ही एवार्ड की राशि का भुगतान किया है, तदनुसार डिक्रीदार ने कुर्की के आदेश जारी करने के लिए एक आवेदन दाखिल किया, जिसके खिलाफ निर्णीत ऋणीगण की ओर से आपत्ति दाखिल की गई थी। निर्णीत ऋणीगण की ओर से दाखिल उपरोक्त आपत्ति को इस न्यायालय द्वारा दिनांक 07.01.2023 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। 07.01.2023 की प्रति संलग्नक A5 के रूप में संलग्न है। आवश्यकतानुसार डिक्रीदार द्वारा 1,13,61,004.20 रुपये का विवरण दाखिल किया गया। इसके बाद इस माननीय न्यायालय ने अमीन को कुर्की का वारंट जारी किया जो 14.02.2023 को मौके पर गया था, लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि निर्णीत ऋणीगण ने उसे आवश्यक कार्य करने की अनुमति नहीं दी, तदनुसार वह वापस आया और न्यायालय को रिपोर्ट प्रस्तुत की। उक्त रिपोर्ट की सत्य प्रतिलिपि इसके साथ संलग्नक ए 6 के रूप में दाखिल की जा रही है। तत्पश्चात 20.03.2023 को कुर्की हेतु नियत किया गया, जिस पर अमीन गया, परन्तु निर्णीत ऋणीगण के असहयोग के कारण सफल नहीं हो सका, अतः वापस लौट आया। निर्णय के निष्पादन की अनुमति न देने के उद्देश्य से श्री संजय गुप्ता ने निर्णीत ऋणीगण में से एक ने धारा 47 सी.पी.सी. के तहत एक आपत्ति दायर की है, जिसे इस न्यायालय ने 01.04.2023 को खारिज कर दिया। सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A7 के रूप में संलग्न है। इसके बाद माननीय न्यायालय ने पुनः कुर्की वारंट जारी कर 28.05.2023 की तिथि निर्धारित की। दिनांक 08.05.2023 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A8 के रूप में दाखिल की जा रही है। इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 01.04.2023 के आदेश के विरुद्ध निर्णीत ऋणीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत माननीय उच्च न्यायालय में याचिका दायर की। उक्त याचिका को दिनांक 05.07.2023 के आदेश के तहत आंशिक रूप से अनुमति दी गई थी, जिसकी सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A9 के रूप में संलग्न है। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 05.07.2023 के आदेश के अनुपालन में, इस न्यायालय ने श्री संजय गुप्ता द्वारा उठाए गए विवाद्यक पर सुनवाई की और उनके द्वारा उठाई गई आपत्ति को खारिज कर दिया। दिनांक 01.11.2023 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A10 के रूप में दाखिल की जा रही है। निर्णीत ऋणीगण के आचरण और रवैये को ध्यान में रखते हुए डिक्रीदार ने पुलिस बल उपलब्ध कराने के लिए आवेदन किया था, जिसे स्वीकार किया गया, तदनुसार इस माननीय न्यायालय द्वारा जारी किए गए एवार्ड में शामिल अचल संपत्तियों के कब्जे के प्रदान करने के लिए वारंट के अनुसार, पुलिस बल की सहायता से कोर्ट अमीन ने 20.03.2024 को डिक्रीदार को कब्जा दिलाया। कोर्ट अमीन ने ताले खोलने के बाद उसमें मिले सामान की सूची तैयार की, उसे डिक्रीदार की सुपुर्दगी में दे दिया। निर्णीत ऋणीगण ने जानबूझकर केवल डिक्रीदार को और अधिक परेशान करने और उसे नुकसान पहुंचाने के लिए

उसके बार-बार अनुरोध के बावजूद उन सामानों को नहीं उठाया। अब तक एवार्ड में शामिल अचल संपत्ति के संबंध में डिक्री निष्पादित की जा चुकी है (क्योंकि यह डिक्रीदार सुरेश कुमार मिश्रा से संबंधित है) लेकिन उन्हें दी गई राशि का भुगतान निर्णीत ऋणीगण द्वारा नहीं किया गया है, बावजूद इसके कि इस न्यायालय द्वारा दिनांक 17.10.2022, 06.12.2022 और 08.05.2023 को आदेश पारित किए गए थे, जिन्हें माननीय उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया है, इसलिए इसे निष्पादित किया जाना है। जब निर्णीत ऋणीगण द्वारा अपनाए गए सभी तरीके विफल हो गए तो उन्होंने माननीय न्यायालय पर अनुचित दबाव बनाने के लिए मामले को स्थानांतरित करने के लिए अन्तरण आवेदन दायर किया, जिसे भी खारिज कर दिया गया। जहां तक निर्णीत ऋणीगण द्वारा लिए गए एवार्ड के पंजीकरण न करने के तर्क का सवाल है, यह पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण, परेशान करने वाला है और धारा 11 स्पष्टीकरण IV, आदेश 2 नियम 2 सी.पी.सी. के तहत किए गए प्रावधानों के विरुद्ध है। अब अपने स्वयं के आचरण से निर्णीत ऋणीगण ने इस तरह के तर्क को लेने के अपने अधिकार का अधित्यजन कर दिया है। अन्यथा भी एवार्ड के पंजीकरण की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में निर्णीत ऋणीगण द्वारा झूठी, तुच्छ और परेशान करने वाली दलील केवल डिक्रीदार को दी गई राशि के भुगतान से बचने के उद्देश्य से दी जा रही है, जबकि उन्होंने सभी उपचारों का उपयोग कर लिया है और हार गए हैं। आवेदन में लगाए गए आरोप दर्शाते हैं कि कैसे एक दृढ़ निश्चयी और बेईमान वादी न्यायिक निर्णय के परिणाम को विफल करने के लिए मुकदमेबाजी को बीच-बीच में खींच सकता है। मुकदमेबाजी का इतिहास निर्णीत ऋणीगण की ओर से क्रूरता और सद्भावना की कमी के अलावा कुछ नहीं दिखाता है जो न केवल निंदा के योग्य है बल्कि उन पर अनुकरणीय हर्जा लगाने के योग्य है। उन्हीं तथ्यों और परिस्थितियों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने टिप्पणी की है कि न्यायालयों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बेईमान वादी अपने दुर्भावनापूर्ण तरीकों से डिक्री धारकों को डिक्री का लाभ देने से वंचित न कर सकें। इतना ही नहीं, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी कहा है कि वादियों की नई नस्ल उभर आई है जो सत्य और न्यायालय के आदेशों का कोई सम्मान नहीं करते। वे अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बेशर्मी से झूठ और अनैतिक साधनों का सहारा लेते हैं। यह अब अच्छी तरह से स्थापित हो चुका है कि जो वादी न्याय की धारा को प्रदूषित करने का प्रयास करते हैं या जो दागी हाथों से न्याय के शुद्ध स्रोत को छूते हैं, वे किसी भी अनुतोष के अधिकारी नहीं हैं। वास्तव में चूंकि निर्णीत ऋणी न्यायालय को गुमराह करने का प्रयास कर रहे हैं, इसलिए वे आगे सुनवाई के अधिकारी नहीं हैं। ऐसी प्रवृत्ति को गंभीरता से लिया जाना चाहिए और उचित आदेश पारित करके तथा अनुकरणीय हर्जा लगाने सहित आवश्यक निर्देश जारी करके इसे रोका जाना चाहिए। उक्त आवेदन के पैरा 1 से 4 की विषय-वस्तु को अभिलेख में प्रस्तुत किए जाने के कारण उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है, सिवाय इस आरोप के कि संपत्तियां (जिनका कब्जा डिक्रीदार को सौंप दिया गया है) निर्णीत ऋणीगण की हैं। उक्त आवेदन के पैरा 5 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और बिना किसी तथ्य के है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया जाता है कि पंचाट को माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 36 के अनुसार निष्पादित नहीं किया जा सकता है। वास्तव में उक्त आरोप अपमानजनक है और अवमानना के दायरे में आता है, जिसके लिए निर्णीत ऋणी के विरुद्ध आवश्यक कार्रवाई की जानी चाहिए। वास्तव में निर्णीत ऋणी अच्छी तरह से जानते हैं कि एवार्ड का हिस्सा सही ढंग से निष्पादित किया गया है और इसके अनुसरण में अचल संपत्ति का कब्जा सही ढंग से डिक्रीदार को दिया गया है, तदनुसार, इस न्यायालय के पास पुनर्स्थापन का कोई आदेश पारित करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है जब तक कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 05.07.2023 का आदेश और इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 01.11.2023 का आदेश बरकरार है। उक्त आवेदन के पैरा 6 की विषय-वस्तु का उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 के अंतर्गत

किए गए प्रावधान उसमें पुनः प्रस्तुत किए गए हैं। हालांकि यह भी कहा गया है कि उक्त प्रावधान निर्णीत ऋणीगण के लिए कोई मदद नहीं करते हैं, क्योंकि उक्त प्रावधान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में बिल्कुल भी लागू नहीं होते हैं। उक्त आवेदन के पैरा 7 और 8 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और बाद में सोची गई है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि एवार्ड के पंजीकरण की दलील अब तक चल संपत्ति के एवार्ड के निष्पादन यानी राशि की वसूली से संबंधित नहीं है। वैसे भी माननीय उच्च न्यायालय द्वारा श्री संजय गुप्ता द्वारा स्वयं दायर किए गए दिनांक 05.07.2023 को पारित आदेश और इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 03.11.2023 के आदेश और पिछले पैरा में किए गए कथनों के दृष्टिगत अब ऐसी कोई आपत्ति नहीं उठाई जा सकती। उक्त आवेदन के पैरा 9 और 10 की विषय वस्तु पूरी तरह से असत्य, दुर्भावनापूर्ण और गुमराह करने वाली है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि धारा 11 में किए गए प्रावधानों, आदेश 2 नियम 2 सी.पी.सी., माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 05.07.2023 के आदेश और इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 03.11.2023 के आदेश के दृष्टिगत कथित दलील अब उन निर्णीत ऋणीगण के लिए उपलब्ध नहीं है, जिनका कानून और न्यायालयों में कोई विश्वास नहीं है और वे इस न्यायालय द्वारा पारित बार-बार आदेशों का लगातार उल्लंघन कर रहे हैं। उक्त आवेदन के पैरा 12 की विषय-वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और विकृत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया जाता है कि पंचाट को माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 37 के तहत माननीय उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई है। वास्तव में, निर्णीत ऋणीगण द्वारा दायर एफ.ए.एफ.ओ. को 6 साल से अधिक समय पहले खारिज कर दिया गया था। उक्त आवेदन के पैरा 13 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और गुमराह करने वाली है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया जाता है कि एवार्ड को कभी भी पढ़ा नहीं जा सकता और साक्ष्य के रूप में नहीं लिया जा सकता। वे आरोप पूरी तरह से निराधार हैं, गुणागुण से रहित हैं, एवार्ड के निष्पादन की कार्यवाही में देरी करने के लिए शाही उपकरण के अलावा कुछ नहीं हैं। वास्तव में निर्णीत ऋणीगण द्वारा लगाए गए आरोप पूरी तरह से (2021) 6 एस.सी.सी. 418 (राहुल एस. शाह बनाम जितेंद्र कुमार गांधी और अन्य) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के तहत निराधार है, जो देश का कानून है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 141 के अनुसार बाध्यकारी मिसाल है। उक्त आवेदन के पैरा 14 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और योग्यता से रहित है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि चूंकि यह एवार्ड अचल संपत्ति से संबंधित है, इसलिए माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 05.07.2023 के आदेश और उसके अनुसरण में इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 03.11.2023 के आदेश के अनुपालन में निष्पादित किया गया है, जिसे निर्णीत ऋणीगण द्वारा चुनौती नहीं दी गई है और अभी भी बरकरार है, तदनुसार प्रतिपूर्ति का सवाल ही नहीं उठता है। निर्णीत ऋणी इसके बारे में अच्छी तरह से जानते हैं, लेकिन केवल डिक्रीदार को दी गई राशि के भुगतान से बचने के लिए वर्तमान आवेदन दायर किया है जो पूरी तरह से गलत है और बनाए रखने योग्य नहीं है। उक्त आवेदन के पैरा 15 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और बिना किसी तथ्य के है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान आवेदन डिक्रीदार को परेशान करने और उस पर अनुचित दबाव बनाने के साधन के रूप में दायर किया गया है ताकि वह दी गई राशि का दावा न कर सके। वास्तव में उक्त आवेदन पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और यहां तक कि बनाए रखने योग्य नहीं है। यह आवेदन न्यायालय के विधि की और प्रक्रिया का दुरुपयोग और दुर्व्यवहार के अलावा कुछ नहीं है, इसलिए इसे भारी हर्जा सहित खारिज किया जाना चाहिए और न्याय के हित में जल्द से जल्द एवार्ड की राशि जारी करने के

लिए निष्पादन आवेदन के पैरा 9 में उल्लिखित निर्णीत ऋणीगण की अचल संपत्तियों की कुर्की का वारंट जारी किये जाने की याचना की गई है।

4. निर्णीत ऋणी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उत्तर सी-85 दाखिल करते हुए मुख्य रूप से कथन किया गया है कि डिक्रीदार यह प्रदर्शित करने में बुरी तरह विफल रहा है कि 12.01.2007 का तथाकथित एवार्ड कभी पंजीकृत किया गया था। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि प्रारंभ से ही डिक्रीदार ने अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करके इस न्यायालय को धोखे से गुमराह किया है और निर्णीत ऋणी की अचल संपत्तियों पर अवैध रूप से कब्ज़ा कर लिया है। इसके अलावा, विचाराधीन एवार्ड का पंजीकरण न होना भी उसे अमान्य बनाता है और इस प्रकार पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 49 के दृष्टिगत साक्ष्य में अस्वीकार्य और कानून में अप्रवर्तनीय बना दिया गया है। 12.01.2007 का तथाकथित एवार्ड डिक्रीदार के पक्ष में 100 रुपये से अधिक मूल्य की अचल संपत्ति के संबंध में अधिकार बनाता है, इस प्रकार यह पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 17 के अंतर्गत आता है और अनिवार्य रूप से पंजीकृत है, ऐसा न करने पर अधिनियम की धारा 49 के तहत सख्त प्रावधान लागू होंगे और एवार्ड अपनी वैधता खो देगा और साक्ष्य में अस्वीकार्य हो जाएगा। इसलिए, किसी ऐसे उपकरण के आधार पर गलत और अवैध रूप से दिया गया कोई भी लाभ जिसे पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 49 के तहत साक्ष्य में नहीं पढ़ा जा सकता था और जो ऐसे अधिकार, स्वत्व और हित को प्रभावित नहीं कर सकता था, शून्य है और इसे अपनी मूल स्थिति में बहाल किया जाना चाहिए। साक्ष्य को स्वीकार करना और न करना न्यायालय का सर्वोच्च कर्तव्य है और इसलिए रचनात्मक रिस ज्यूडिकाटा या एस्टोपल पर आधारित दलील कानून और न्यायालय की शक्तियों के खिलाफ कायम नहीं रह सकती, जब माननीय न्यायालय को ही डिक्रीदार द्वारा चालाकी और शरारतपूर्ण तरीके से धोखा दिया गया है। इसलिए, इस न्यायालय में कानून के बल द्वारा परिकल्पित अंतर्निहित शक्तियों को देखते हुए, इस माननीय न्यायालय के पास न केवल अपंजीकृत एवार्ड के अनुसरण में पारित आदेशों की समीक्षा करने की शक्तियाँ हैं, बल्कि उनके अचल संपत्तियों के निर्णीत ऋणीगण को वापस करने की पर्याप्त शक्तियाँ भी हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ नंबर 1 की विषय-वस्तु झूठी, तुच्छ, इस माननीय न्यायालय को धोखा देने का प्रयास है तथा पंजीकरण अधिनियम 1908 की धारा 17 के अनुसार एवार्ड को विधिवत पंजीकृत करवाने के अपने दायित्व से बचने का प्रयास है। इसके अलावा, डिक्रीदार ने अपने आवेदन में निर्णीत ऋणी द्वारा गैर-पंजीकरण की स्पष्ट दलील के खिलाफ कोई आपत्ति नहीं उठाई है, जो कि डिक्रीदार की ओर से यह स्वीकारोक्ति है कि उसने न तो एवार्ड को पंजीकृत करवाया है और न ही उसे पंजीकृत करवाने का कोई आशय है। इस प्रकार, निर्णीत ऋणी, पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 49 की कठोरताओं के दृष्टिगत, वैध पंजीकरण के अभाव में पहले से दी गई अचल संपत्तियों के संबंध में प्रतिपूर्ति पाने के अधिकारी हैं। डिक्रीदार को निर्णीत ऋणी के आचरण और आशय पर सवाल उठाने का कोई अधिकार नहीं है, जब उसने अपने आचरण से यह स्पष्ट कर दिया है कि निष्पादन कार्यवाही कपट और तथ्यों को छिपाने से ग्रस्त है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 2 और 3 की विषय-वस्तु अभिलेखों का विषय है, अतः उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है, तथापि अभिलेखों से प्रतिकूल कुछ भी कहने से स्पष्ट रूप से इनकार किया जाता है। आपत्तियों के पैराग्राफ नंबर 4 की विषय वस्तु झूठी, तुच्छ और मामले को सनसनीखेज बनाने का एक असफल प्रयास है, इसलिए जिस तरह से उन्हें बताया गया है, उससे इनकार किया जाता है। निर्णीत ऋणीगण कानून से ऊपर नहीं हैं और कानून की उचित प्रक्रिया का सहारा लेने के अलावा, उन्होंने किसी भी समय इन कार्यवाहियों को अवैध रूप से नहीं रोका है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 5 से 13 की विषय-वस्तु अवैध, झूठी, गलत है और यह डिक्रीदार द्वारा निर्णय पर अपेक्षित स्टाम्प शुल्क का भुगतान करने से बचने का प्रयास है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि आज तक स्टाम्प शुल्क की कमी के मुद्दे पर गुण-

दोष के आधार पर विचार नहीं किया गया है और निस्संदेह किसी भी न्यायालय ने इस तथ्य के बारे में कभी कोई जांच नहीं की है कि डिक्रीदार ने एवार्ड पर देय पर्याप्त स्टाम्प शुल्क का भुगतान किया है या नहीं। इसलिए, जब तक यह माननीय न्यायालय इस पहलू पर गुण-दोष के आधार पर स्पष्ट रूप से जांच नहीं करता है, तब तक स्टाम्प शुल्क के मुद्दे पर रेस जुडिकाटा की कठोरता लागू नहीं होती है, विशेष रूप से उन कार्यवाहियों के दृष्टिगत जो निश्चित रूप से अतिरिक्त महानिरीक्षक स्टाम्प, लखनऊ के समक्ष लंबित हैं। आज तक डिक्रीदार ने इस न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय के समक्ष यह स्पष्ट नहीं किया है कि उसके द्वारा भुगतान किया गया स्टाम्प शुल्क पर्याप्त कैसे है, जबकि रिकॉर्ड के अनुसार स्टाम्प शुल्क में कमी प्रतीत होती है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 14 की विषय वस्तु कष्टप्रद, अवैध और गलत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह भी कहा गया है कि डिक्रीदार को दी गई अचल संपत्तियों का कब्ज़ा तथाकथित अपंजीकृत एवार्ड के आधार पर है, इस तथ्य को जानबूझकर इस माननीय न्यायालय से छुपाया गया, क्योंकि इस संबंध में निर्णीत ऋणीगण द्वारा बार-बार आपत्तियां उठाए जाने के बाद भी एवार्ड की मूल प्रति दाखिल नहीं की गई। डिक्रीदार स्वयं तथ्यों को छिपाने और स्टाम्प ड्यूटी की चोरी करने के साथ-साथ एवार्ड का पंजीकरण न करने का दोषी है। एक ओर डिक्रीदार इस माननीय न्यायालय से दया की अपेक्षा करता है, जबकि दूसरी ओर न तो अपेक्षित स्टाम्प ड्यूटी का भुगतान करने का कोई इरादा रखता है और न ही उसने अपनी आपत्तियों में इस तथ्य का खुलासा किया है कि एवार्ड पंजीकृत है या नहीं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 15 की विषय-वस्तु फिर से परेशान करने वाली, अवैध, गलत है और पंजीकरण तथा स्टाम्प शुल्क के भुगतान से बचने का एक मात्र प्रयास है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विचाराधीन एवार्ड गैर-विभाज्य होने के कारण अपेक्षित स्टाम्प शुल्क का भुगतान किए बिना या एवार्ड शुल्क पंजीकृत कराए बिना निष्पादित नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, एक बार जब डिक्रीदार को अवैध और गलत तरीके से एक अस्वीकार्य और अमान्य एवार्ड के आधार पर अचल संपत्तियों का कब्ज़ा दिया गया है, तो उसे निर्णीत ऋणीगण के पक्ष में वापस किया जाना चाहिए और ऐसी अवधि तक डिक्रीदार अपने निष्पादन आवेदन में कोई भी राशि प्राप्त नहीं कर सकता है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 16 की विषय-वस्तु पुनः निराधार, कष्टप्रद, अवैध है तथा इसका वर्तमान मामले से कोई संबंध नहीं है, अतः इसे अस्वीकार किया जाता है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 17 से 19 की विषय वस्तु मनगढ़ंत, अवैध, तुच्छ और घोर गलत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह भी कहा गया है कि न ही कानून और न्यायालय की शक्तियों के विरुद्ध पुन:न्यायिकता की दलील पर कोई रोक नहीं लगाई जा सकती है,। सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में धारा 11 या आदेश II नियम 2 के अंतर्गत निहित प्रावधान मध्यस्थता के तहत कार्यवाही पर लागू नहीं होते हैं और केवल मुकदमे के लिए लागू होते हैं। फिर भी, एस्टोपल या रेस-ज्यूडिकाटा के अंतर्निहित सिद्धांतों पर विचार करते हुए भी, किसी भी कार्यवाही में किसी भी स्तर पर अधिकार क्षेत्र और कानून के प्रतिबंध के आधार पर आपत्ति के संबंध में कोई रोक नहीं हो सकती है, खासकर तब जब संबंधित एवार्ड अनिवार्य रूप से पंजीकृत होने के कारण न्यायालय द्वारा प्रवर्तन के लिए अस्वीकार्य और अमान्य होने के कारण खारिज कर दिया जाना चाहिए था। इसलिए, डिक्रीदार न्यायालय द्वारा की गई किसी गलती या गलत काम का लाभ लेना जारी नहीं रख सकता है, जो फिर भी समीक्षा के योग्य है, इसके अलावा निर्णीत ऋणीगण के पक्ष में बहाल किया जाना चाहिए। डिक्रीदार स्वयं एक बेईमान और अवमाननापूर्ण वादी है, जिसने एवार्ड की मूल प्रति दाखिल न करके, इस माननीय न्यायालय को गलत तरीके से गुमराह किया है और एक राहत प्राप्त की है जो अन्यथा कानून के स्थापित सिद्धांतों के आधार पर प्रदान नहीं की जा सकती थी, इस प्रकार डिक्रीदार किसी भी तरह की समानता की मांग नहीं कर सकता है और उसे अपने आचरण के लिए भुगतना होगा। पैराग्राफ संख्या 20 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, अवैध, तुच्छ और इस माननीय न्यायालय को गुमराह

करने का प्रयास है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। जवाब में, निर्णीत ऋणी आवेदन के पैराग्राफ संख्या 1 से 4 की विषय वस्तु को दोहराते हैं। पैराग्राफ संख्या 21 और 22 की विषय-वस्तु अवैध, तुच्छ, घोर गलत, त्रुटिपूर्ण और अस्पष्ट है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह भी कहा गया है कि पैराग्राफ 21 और 22 में दी गई विषय वस्तु अवैध, तुच्छ, घोर गलत, त्रुटिपूर्ण और अस्पष्ट है। किसी भी और सभी न्यायालयों ने इस बात को स्वीकार किया है कि न्यायालय द्वारा दिया गया अनुतोष या तो कानून के गलत इस्तेमाल के आधार पर या किसी पक्ष द्वारा कपट और तथ्यों को छिपाने के आधार पर दी गई थी, तो दूसरे पक्ष को समीक्षा करने और उसे वापस लौटाने की अंतर्निहित शक्तियाँ, वर्तमान कार्यवाही के तथ्य और परिस्थितियाँ इस न्यायालय के अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए उपयुक्त हैं, ताकि विशेष रूप से तथाकथित अपंजीकृत और अपर्याप्त रूप से स्टाम्प लगे एवार्ड के अनुसरण में पारित किए जाने के दृष्टिगत पिछले आदेशों की समीक्षा की जा सके और निर्णीत ऋणीगण के पक्ष में प्रतिपूर्ति प्रदान की जा सके। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 23 और 24 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, अवैध और कानून के स्थापित सिद्धांतों के खिलाफ है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह भी कहा गया है कि डिक्रीदार केवल एवार्ड के लाभों को हड़पने में रुचि रखता है, जबकि स्टांप शुल्क के भुगतान के साथ-साथ एवार्ड के पंजीकरण से बचता है। अन्यथा भी, अधिकार क्षेत्र के बिना गलत तरीके से दी गई कोई भी राहत इस माननीय न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों के क्षेत्राधिकार के तहत सुधार योग्य है, इसलिए डिक्रीदार इस माननीय न्यायालय को धोखा देकर अचल संपत्तियों को रोक नहीं सकता है। इसके अलावा, माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय जहां पंजीकरण के मुद्दे से संबंधित है इसलिए आपत्ति इस माननीय न्यायालय के अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र की कमी के कारण बिना किसी पूर्व सूचना के तथाकथित एवार्ड को स्वीकार करना और लागू करना पंजीकृत को दरकिनार नहीं किया जा सकता और आदेश II के प्रावधानों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता नियम 2 का इस मुद्दे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, खासकर तब जब इसे सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि भूमि अधिग्रहण अधिकार क्षेत्र की कमी के संबंध में एक याचिका किसी भी कार्यवाही के किसी भी चरण में लिया जा सकता है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 25 की विषय-वस्तु अवैध, मनगढ़ंत है और यह डिक्रीदार द्वारा अपनी देनदारियों से बचने का जल्दबाजी में किया गया प्रयास है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। बेशक, माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 37 के तहत कार्यवाही माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है, जिसमें माननीय उच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुसार निर्णीत ऋणीगण ने अपने प्रतिस्थापन आवेदन दायर किए हैं और मामले की सुनवाई की जाएगी और किसी भी समय अंतिम रूप से निर्णय लिया जाएगा। आपत्तियों के पैराग्राफ नंबर 26 की विषय वस्तु भी पूरी तरह से गलत, अवैध, निराधार और पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 49 के तहत निहित स्पष्ट प्रावधानों के विपरीत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। जवाब में निर्णीत ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ नंबर 26 की विषय वस्तु को दोहराते हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 27 की विषय वस्तु कानून के स्पष्ट प्रावधानों की पूरी तरह से अनदेखी है, इसलिए इसे पूरी तरह से गलत, अवैध और परेशान करने वाला होने के कारण अस्वीकार किया जाता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि डिक्रीदार के कब्जे में अचल संपत्तियां इस माननीय न्यायालय द्वारा कानून के गलत आवेदन पर अधिकार क्षेत्र के गलत प्रयोग के तहत दी गई हैं, विशेष रूप से जब एवार्ड न तो पंजीकृत था और न ही उस पर अपेक्षित स्टांप शुल्क का भुगतान किया गया था, इसलिए इसे न तो साक्ष्य में पढ़ा जा सकता है और न ही निष्पादित किया जा सकता है। इसलिए, यह निर्णीत ऋणीगण के पक्ष में अचल संपत्तियों की वापसी के लिए एक उपयुक्त मामला है। ऐसा प्रतीत होता है कि डिक्रीदार गलत धारणा के तहत है कि वापसी केवल तभी दी जा सकती है जब कोई आदेश/निर्णय अपीलीय न्यायालय द्वारा पलट दिया जाता है, हालाँकि देश का कानून प्रत्येक न्यायालय को अपने स्वयं के आदेशों की

समीक्षा करने के लिए पर्याप्त शक्तियां प्रदान करता है, जो कानून और तथ्यों के गलत अनुप्रयोग पर गलत तरीके से पारित किए गए हैं और उसके बाद सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 151 के तहत निहित अपनी अंतर्निहित शक्तियों के तहत पीड़ित पक्ष को प्रतिपूर्ति प्रदान करता है। आपत्तियों के पैराग्राफ 28 और 29 की विषय वस्तु अस्पष्ट, तुच्छ, अप्रासंगिक है और वर्तमान विवाद में शामिल प्रश्न के उत्तर से बचने का एक प्रयास है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। आवेदन के पैराग्राफ 27 से 29 की विषय वस्तु को दोहराते हुए, निर्णीत ऋणी फिर से संक्षेप में बताते हैं कि पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 49 के दृष्टिगत इसके गैर-पंजीकरण, अमान्य और अप्रवर्तनीयता के परिणामस्वरूप डिक्रीदार तथाकथित एवार्ड से किसी भी लाभ के लिए अधिकारी नहीं है। प्रश्नगत एवार्ड की मूल प्रति दाखिल न करने के कारण यह पहलू किसी तरह इस माननीय न्यायालय द्वारा ध्यान में नहीं लिया गया और अनजाने में इस न्यायालय ने रिकॉर्ड के आधार पर एक स्पष्ट क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि की है, जिसे फिर भी इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों के दृष्टिगत समीक्षा की जा सकती है, इसके अलावा, अब यह कानून का एक व्यापक रूप से स्वीकृत सिद्धांत है कि किसी बेईमान वादी को कानून या तथ्यों या भूल के गलत प्रयोग के तहत अनजाने में पारित आदेश के प्रभाव का आनंद लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह कि उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों तथा आवेदन के दृष्टिगत निष्पादन कार्यवाही को खारिज करने और अचल संपत्तियों की वापसी के लिए आवेदन निर्णीत ऋणी के पक्ष में डिक्रीदार के विरुद्ध हर्जा सहित स्वीकृत किया जा सकता है, जिसने जानबूझकर इस न्यायालय को गुमराह किया है और जानबूझकर मूल रूप में इसे दाखिल न करके एवार्ड के गैर-पंजीकरण के तथ्य को छुपाया है।

5. निर्णीत ऋणी की ओर से अपने कथनों के समर्थन में निम्नलिखित विधि व्यवस्थाओं **Lachhman Dass v. Ram Lal and Another, (1989) 3 SCC 99, Ratan Lal Sharma v. Purshottam Harit, (1974) 1 SCC 671 : AIR 1974 SC 1066, Ramesh Kumar v. Furu Ram, (2011) 8 SCC 613 : (2011) 4 SCC (Civ) 303, South Eastern Coalfields Ltd. v. State of M.P. and Others (2003) 8 SCC 648, Kavita Trehan (Mrs.) and Another v. Balsara Hygiene Products Ltd., (1994) 5 SCC 380, Gangadhar and Others v. Raghubar Dayal, 1974 All LJ 751 (FB): AIR 1975 All 102 (FB), Canara Bank v. N.G. Subbaraya Setty and Another, (2018) 16 SCC 228** पर न्यायालय का ध्यान आकृष्ट कराया गया। न्यायालय द्वारा माननीय न्यायालय की उक्त विधि व्यवस्थाओं का ससम्मान अवलोकन किया गया।

6. निर्णीत ऋणी सं० 1 की ओर से प्रार्थना पत्र सी-88 मय शपथ पत्र सी-89 निष्पादन कार्यवाही को खारिज करने के हेतु प्रस्तुत करते हुए यह कथन किया गया है कि यह आवेदन, इस न्यायालय के अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का आह्वान करते हुए, वर्तमान निष्पादन वाद को खारिज करने की मांग करते हुए प्रस्तुत किया जा रहा है कि दिनांक 12.01.2007 का विचाराधीन एवार्ड, अधिकार क्षेत्र के बिना दिया गया था, दिनांक 10.11.1996 के समझौते के आधार पर जो सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26/1979) की धारा 5-ए के तहत निहित प्रावधानों का पालन करने में विफलता के कारण शुरू से ही शून्य है, कानून की नजर में अमान्य है और इस न्यायालय द्वारा निष्पादित नहीं किया जा सकता है। दिनांक 10.11.1996 का समझौता, निर्णीत ऋणी (समझौते में 'प्रथम पक्ष' के रूप में संदर्भित), प्रगति शील शिक्षा समिति (समझौते में 'द्वितीय पक्ष' के रूप में संदर्भित), डिक्रीदार (समझौते में 'तृतीय पक्ष' के रूप में संदर्भित) और बिल्डर (समझौते में 'चतुर्थ पक्ष' के रूप में संदर्भित) के बीच एक त्रिपक्षीय व्यवस्था है, जिसमें प्रस्तावित निर्माण के विभिन्न भागों में अनन्य स्वामित्व अधिकार प्रदान किए गए हैं। मूल रूप से, केवल द्वितीय पक्ष यानी प्रगति शील शिक्षा समिति के पास, स्कूल चलाने के उद्देश्य

से, संबंधित संपत्ति के एक निश्चित दक्षिणी हिस्से पर अपरिवर्तनीय लाइसेंस था। हालांकि, संबंधित संपत्ति पर निर्माण को सुविधाजनक बनाने के लिए, प्रस्तावित निर्माण में अविभाजित हिस्से के धारणाधिकार में द्वितीय पक्ष ने अपने कब्जे में मौजूद हिस्से को खाली कर दिया। यह स्वीकार किया जाता है कि दिनांक 10.11.1996 के उपरोक्त अनुबंध के पृष्ठ संख्या 9 पर निहित खंड 6 के अनुसार, प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) ने अपने अविभाजित हिस्से में से निर्मित भवन के उत्तरी ब्लॉक में कुछ भागों को हस्तांतरित करने का संकल्प लिया है। दिनांक 10.11.1996 के अनुबंध के पृष्ठ संख्या 9 पर निहित खंड 6 का प्रासंगिक भाग नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है।

"6. ..... and First Floor and Front Upper Ground Floor half portion shall be allotted to in the name of Shri Suresh Kumar Misra: Third Party hereto to who the Samiti has resolved for the said allotment in lieu of his services rendered in the past. ....."

उपर्युक्त खंड के मात्र अवलोकन से यह स्पष्ट है कि, वर्तमान वाद में डिक्रीदार (तृतीय पक्ष) द्वारा जो अंश सौंपे गए हैं, उन्हें सोसायटी द्वारा अपने स्वयं के संकल्प के आधार पर, अपने स्वयं के अविभाजित हिस्से में से उसे हस्तांतरित करने का प्रयास किया गया है। जबकि, डिक्रीदार (तृतीय पक्ष) द्वारा दिया गया प्रतिफल, जैसा कि इसमें स्पष्ट रूप से प्रावधान किया गया है, केवल द्वितीय पक्ष को ही दिया जाएगा। यहां यह उल्लेख करना भी उचित है कि उक्त समझौते में प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) की ओर से हस्ताक्षरकर्ता स्वयं डिक्रीदार है। इसका अर्थ यह है कि डिक्रीदार ने स्वयं प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) की ओर से कथित रूप से कपटपूर्ण और संदिग्ध तरीके से सोसायटी की अचल संपत्तियों को अपने नाम पर स्थानांतरित करने का प्रयास किया है। तथाकथित अन्तरण का उद्देश्य द्वितीय पक्ष के उक्त अविभाजित हिस्से को डिक्रीदार (तृतीय पक्ष) को स्वामित्व अधिकारों के साथ-साथ उसके स्वत्व के साथ पूर्ण रूप से सौंपना था, जिसे समझौते के पृष्ठ संख्या 10 पर निहित खंड (बी) के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। 10.11.1996 के समझौते की एक प्रति इस आवेदन के संलग्नक संख्या 1 के रूप में दाखिल की गई है। जैसा कि समझौते के पृष्ठ संख्या 2 पर निर्धारित है, दिनांक 10.11.1996 को उपरोक्त समझौते में प्रवेश करते समय, उक्त प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के तहत पंजीकृत सोसायटी थी, जिसका पंजीकरण नंबर 873/88-89 है। इसलिए, सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत निहित प्रावधान और साथ ही इसमें किए गए राज्य संशोधन अनिवार्य रूप से सोसायटी पर लागू होते हैं। इस समय, यह इंगित करना उचित है कि समझौते के खंड 6 के अंतर्गत अन्तरण करने के उपरोक्त प्रयास करने से पहले, डिक्रीदार के साथ-साथ प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यूपी अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत प्रदान किए गए माननीय जिला न्यायाधीश की पूर्व स्वीकृति प्राप्त करने और रजिस्ट्रार सोसायटी के समक्ष उसे दाखिल करने में विफल रहे, जिसने उपरोक्त अन्तरण को शून्य घोषित कर दिया है और अन्तरण कभी प्रभावी नहीं हुआ। परिणामस्वरूप, जहां तक यह उक्त शून्य अन्तरण से डिक्रीदार (तृतीय पक्ष) के पक्ष में अर्जित अधिकारों से संबंधित है, यह समझौता भी शुरू से ही शून्य है और इसलिए विद्वान एकल मध्यस्थ के पास शून्य समझौते और शून्य मध्यस्थता खंड पर कार्रवाई करने के लिए अंतर्निहित अधिकारिता का अभाव था, जो सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत निहित वैधानिक प्रतिबंध के दृष्टिगत कभी अस्तित्व में नहीं आया। यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979 के राजपत्र की एक फोटोकॉपी इस आवेदन के संलग्नक संख्या 2 के रूप में दाखिल की गई है। सोसायटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के अंतर्गत निहित प्रावधानों को पुनः उद्धृत किया जाता है।

"5-A. Restriction on transfer of property-

(1) Notwithstanding anything contained in any law, contract or other instrument to the contrary, it shall not be lawful for the governing body of a Society, registered under this Act or any of its members to transfer, without the previous approval of the Court, any immovable property, belonging to such Society.

(2) Every transfer made in contravention of sub-section (1) shall be void.

Explanation 1. The word 'Court' shall have the meaning assigned to it in Section 13.

Explanation II. The expression 'transfer' shall for the purposes of this section means (a) a mortgage, charge, sale, gift, or exchange;

(b) lease for a term exceeding five years;

(c) or irrevocable licence."

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 26, 1979 की धारा 5-ए अनिवार्य और प्रतिबंधात्मक प्रावधान हैं, जिन्हें अधिनियम के तहत पंजीकृत किसी सोसायटी की अचल संपत्तियों को अंतरित करने के अवैध और कपटपूर्ण प्रयासों पर निगरानी रखने के लिए डाला गया है, जो आम जनता के लाभ के लिए कार्य करती हैं और उनकी संपत्तियों को अवैध रूप से बेदखल किए जाने की अधिक संभावना है। इसलिए, वर्तमान मामले में अवैध रूप से और धोखे से की गई संपत्तियों के दुरुपयोग और अवैध अन्तरण को रोकने के लिए विधानमंडल ने दूरदर्शिता दिखाई है। ऐसे असफल अन्तरणों के लिए माननीय जिला न्यायाधीश से पूर्व अनुमोदन प्राप्त करना अनिवार्य कर दिया गया। उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 26/1979 की धारा 5-ए की उपधारा (2) के अंतर्गत माननीय जिला न्यायाधीश से पूर्व अनुमोदन प्राप्त न करने के प्रभाव और परिणाम का प्रावधान किया गया है। उपधारा यह प्रावधान करती है कि उपधारा (1) के अंतर्गत निहित प्रावधानों के उल्लंघन में किया गया कोई भी अन्तरण, अन्तरण को अमान्य कर देता है, जिससे वह शून्य हो जाता है, इसलिए यह अनिवार्य प्रकृति का है। इसलिए, माननीय जिला न्यायाधीश से किसी भी पूर्व अनुमोदन के अभाव में, डिक्रीदार (तृतीय पक्ष) के पक्ष में प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) की अचल संपत्ति में अविभाजित हिस्से का तथाकथित अन्तरण, आरंभ से ही शून्य है। परिणामस्वरूप, उक्त शून्य लेनदेन से उत्पन्न मध्यस्थता का संदर्भ न केवल क्षेत्राधिकार से बाहर है, बल्कि धारा 5-ए के तहत निहित कानूनी प्रतिबंध के प्रभाव को दरकिनार करते हुए और उसे शून्य करते हुए पारित किया गया एवार्ड भी अविधिक है। यह भी बताना उचित है कि निर्णीत ऋणीगण ने अपने अधिवक्ता के माध्यम से उप रजिस्ट्रार, चिट्स, फंड और सोसाइटीज, लखनऊ के कार्यालय से सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत आवश्यक जानकारी भी मांगी है। उसी के अनुसरण में, 13.07.2023 को उप रजिस्ट्रार, चिट्स, फंड और सोसाइटीज ने स्पष्ट रूप से सूचित किया है कि, न तो डिक्रीदार, और न ही सोसाइटी ने सुरेश कुमार मिश्रा के पक्ष में अचल संपत्ति के अन्तरण की कोई जानकारी प्रदान की है। इसलिए, अभिलेखों से यह स्पष्ट है कि तथाकथित अन्तरण के संबंध में कभी भी कोई पूर्व अनुमोदन नहीं मांगा गया है। सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत उप रजिस्ट्रार द्वारा प्रदान की गई सूचना और आरटीआई आवेदन की प्रतियां सामूहिक रूप से इस आवेदन के संलग्नक संख्या 3 के रूप में दाखिल की गई हैं। यहां यह उल्लेख करना भी उचित है कि, किसी क़ानून की अनिवार्य आवश्यकताओं का पालन करने में विफलता, जो स्पष्ट रूप से यह प्रावधान करती है कि ऐसी विफलता के परिणामस्वरूप उक्त लेनदेन शून्य हो जाएगा, पक्षकारों की छूट/सहमति या सक्रिय या निष्क्रिय स्वीकृति द्वारा ठीक नहीं किया जा सकता है। इसलिए, परिणामस्वरूप, यहां तक कि पक्षकार स्वयं भी विद्वान एकल मध्यस्थ को अधिकार क्षेत्र नहीं दे सकते थे, क्योंकि एक बार अधिकार क्षेत्र की अंतर्निहित कमी थी, क्योंकि समझौता शुरू से ही

शून्य था। विचाराधीन करार, जहां तक यह कथित रूप से डिक्रीदार के पक्ष में अधिकारों का सृजन करता है, भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 23 के अर्थ में भी प्रारम्भ से ही शून्य है और इस प्रकार, कानून के अनिवार्य प्रावधान की अवहेलना को मंजूरी देते हुए इसके आधार पर पारित किया गया एवार्ड, इस न्यायालय द्वारा निष्पादित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि यह शून्य है और कानून द्वारा गलत है। विद्वान एकल मध्यस्थ के समक्ष भी, धारा 5-ए, उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 26/1979 के अनुपालन के संबंध में कानून के तहत कोई अनुमान नहीं था। अतः विद्वान एकल मध्यस्थ का दायित्व है कि वह डिक्रीदार द्वारा प्रस्तुत दावे को प्रारम्भ में ही अस्वीकार कर दे। दिनांक 10.11.1996 के समझौते के खंड 6 में संदर्भित कथित संकल्प भी, उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 26/1979 की धारा 5-ए की उपधारा (1) के अंतर्गत स्थापित संपूर्ण गैर-बाधा खंड के दृष्टिगत कोई महत्व नहीं रखता है। डिक्रीदार के आचरण से यह स्पष्ट है कि, अन्तरण का उक्त प्रयास धोखे से और अवैधानिक रूप से किया गया है, जिसमें दिनांक 10.11.1996 के समझौते के साथ-साथ तथाकथित संकल्प को यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979 की धारा 5-ए के तहत निहित प्रावधानों को जानबूझकर दरकिनार करने के उपकरण के रूप में उपयोग किया गया है। इसलिए, उक्त अवैध अन्तरण, यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979 की धारा 5-ए के तहत अनिवार्य और निषेधात्मक प्रावधानों को सम्मिलित करने की विधायी आवश्यकता और अनिवार्यता को प्रदर्शित करने का एक उदाहरण है। यह मुद्दा न केवल विद्वान एकल मध्यस्थ के स्थानांतरणोंअधिकार क्षेत्र की जड़ तक जाता है, बल्कि 10.11.1996 के समझौते को भी रद्द करता है, जहां तक यह प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) द्वारा अपने अविभाजित हिस्से में से डिक्रीदार (तृतीय पक्ष) के पक्ष में किए गए तथाकथित स्वामित्व अन्तरण से संबंधित है। इसलिए, इस मुद्दे पर विचार किया जा सकता है और इन निष्पादन कार्यवाही में निपटा जा सकता है, क्योंकि समझौता, मध्यस्थता खंड और इसके अनुसरण में दिया गया एवार्ड, उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 26/1979 की धारा 5-ए के अंतर्गत निहित प्रतिबन्ध के दृष्टिगत, अनिर्धारित और प्रारम्भतः शून्य है, जिसके अनुसार, उक्त प्रावधान दिनांक 10.11.1996 को अनुबंध के निष्पादन के समय पूरी तरह से अस्तित्व में था और विद्वान एकल मध्यस्थ के समक्ष अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का अभाव था। वर्तमान आवेदन निष्पादन के चरण में बनाए रखने योग्य है, क्योंकि, एक बार जब समझौता, जहां तक यह डिक्रीदार से संबंधित है, शुरू से ही शून्य था, इसलिए, मध्यस्थता खंड कभी अस्तित्व में नहीं था, परिणामस्वरूप, विद्वान एकल मध्यस्थ के पास अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र नहीं था। इसलिए, 12.01.2007 का एवार्ड भी कानून की दृष्टि में अमान्य है और इस माननीय न्यायालय द्वारा निष्पादित नहीं किया जा सकता है। अन्यथा भी, जब समझौता जो पूरे विवाद का आधार है, कानून के संचालन से शून्य हो गया था और कभी अस्तित्व में नहीं था, तो निर्णीत ऋणीगण को इस चरण में या यहां तक कि एक नई कार्यवाही में इसके परिणामस्वरूप पारित एवार्ड की शून्यता के बारे में आपत्तियां लेने से नहीं रोका जा सकता है। इसलिए, अनिवार्य वैधानिक प्रतिबंध द्वारा समझौते को प्रभावित करने के कारण एवार्ड को बनाए नहीं रखा जा सकता है, ऐसा न करने पर, यह किसी ऐसी चीज को सहायता प्रदान करेगा जो कानून के विपरीत है और सार्वजनिक नीति के विपरीत है। यह स्थापित कानून है कि, कानून के खिलाफ न तो कोई रोक हो सकती है, न ही अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र की कमी के संबंध में किसी प्रश्न को रिस ज्यूडिकेटा के सिद्धांतों द्वारा रोका जा सकता है। इसलिए, यहाँ उठाया गया प्रश्न, एक शुद्ध कानून का प्रश्न है, जिसके परिणामस्वरूप एवार्ड के साथ-साथ समझौता भी शून्य और शुरू से ही शून्य है, इस स्तर पर बहुत अच्छी तरह से देखा जा सकता है। इसके अलावा, डिक्रीदार ने एवार्ड पर पर्याप्त स्टाम्प शुल्क भी नहीं दिया है, जिस आपत्ति को वर्तमान कार्यवाही में किसी भी निर्णय या विवेक के बिना दरकिनार कर दिया गया है, जो गलत है। भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 की धारा 3, अनुसूची 1, अनुच्छेद 12 के अनुसार, धन डिक्री/एवार्ड के साथ-साथ अचल संपत्तियों पर भी एवार्ड स्टाम्प किए जाने योग्य है, हालांकि, एक

साधारण गणितीय गणना से भी यह स्पष्ट है कि एवार्ड/डिक्रीदार द्वारा भुगतान की गई 34,440.00 रुपये की स्टाम्प ड्यूटी बेहद अपर्याप्त है, इसलिए पिछले आदेशों में दिए गए निष्कर्ष गलत हैं। स्टाम्प ड्यूटी के मुद्दे पर गलत निर्णय के खिलाफ कोई रिस ज्यूडिकेटा नहीं हो सकता क्योंकि यह इस माननीय न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर आघात करता है कि वह इस पर कार्रवाई करे और इसे साक्ष्य के रूप में पढ़े। इसके अलावा, भले ही माननीय उच्च न्यायालय ने 2511/2023 (संजय गुप्ता बनाम सुरेश कुमार मिश्रा और अन्य) में इस मुद्दे को गुण-दोष के आधार पर निपटाए बिना यह माना है कि स्टाम्प ड्यूटी का मुद्दा रिस ज्यूडिकेटा के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है। हालाँकि, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा हाल ही में दिए गए निर्णय में न्यायालय ने **(**2024) 6 एससीसी 1 में "माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम 1996 और भारतीय स्टाम्प अधिनियम 1899 के तहत मध्यस्थता समझौतों के बीच अंतर्सम्बन्ध" में माना है कि किसी उपकरण पर स्टाम्प लगाने से संबंधित मुद्दा एक क्षेत्राधिकार संबंधी मुद्दा है और मामले की जड़ तक जाता है। इसलिए, उपर्युक्त संदर्भ में, जहां कानूनी स्थिति में बाद में बदलाव होता है, स्टांप शुल्क की कमी के रूप में आपत्ति के खिलाफ कोई न्यायिक मुद्दा नहीं हो सकता है, जो निस्संदेह एक क्षेत्राधिकार का मुद्दा है, जैसा कि एरच बोमन खावर बनाम तुकाराम श्रीधर भट और अन्य, (2013) 15 एससीसी 655 और मथुरा प्रसाद बाजू जायसवाल और अन्य बनाम डोसीबाई एन. बी. जीजीभॉय, (1970) 1 एससीसी 613 में रिपोर्ट में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा माना गया है, जिसमें इसे स्पष्ट रूप से निम्नानुसार माना गया है:

"न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से संबंधित किसी प्रश्न को न्यायालय के त्रुटिपूर्ण निर्णय द्वारा अंतिम रूप से निर्धारित नहीं माना जा सकता। यदि न्यायालय कानून की गलत व्याख्या के कारण यह मानता है कि उसके पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, तो हमारे निर्णय के अनुसार यह प्रश्न रिस जुडिकाटा के रूप में कार्य नहीं करेगा। इसी प्रकार, यदि न्यायालय गलत निर्णय के कारण ऐसा अधिकार क्षेत्र ग्रहण कर लेता है जो उसके पास कानून के तहत नहीं है, तो यह प्रश्न उन्हीं पक्षों के बीच रिस जुडिकाटा के रूप में कार्य नहीं कर सकता, चाहे बाद के मुकदमे में कार्रवाई का कारण वही हो या अन्यथा।"

अतः, ऊपर वर्णित तथ्यों, कारणों और परिस्थितियों के आधार पर, निर्णीत ऋणीगण द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ इस न्यायालय के समक्ष लंबित निष्पादन वाद संख्या 94/2020 (सुरेश कुमार मिश्रा बनाम संजय गुप्ता एवं अन्य) से उत्पन्न संपूर्ण निष्पादन कार्यवाही को खारिज करते हुए, न्यायहित में, निर्णीत ऋणीगण को आवश्यक प्रतिपूर्ति प्रदान करने की याचना की गई है।

7. डिक्रीदार के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आपत्ति सी-92 मय शपथ पत्र सी-93 प्रस्तुत करते हुए मुख्य रूप से कथन किया गया है कि निर्णीत ऋणीगण की ओर से दाखिल आवेदन (जिसे आगे उक्त आवेदन के रूप में संदर्भित किया गया है) पूरी तरह से तुच्छ, दुर्भावनापूर्ण, विद्वेषपूर्ण, कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने के अलावा कुछ भी नहीं है और बनाए रखने योग्य नहीं है, इसलिए भारी हर्जे के साथ खारिज किए जाने योग्य है। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान आवेदन राहुल शाह के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून और आदेश की पूरी तरह से अवहेलना करते हुए पेश किया गया है। प्रकीर्ण एकल वाद 18205/2020 में दिनांक 22.10.2020 को पारित आदेश तथा अनुच्छेद 227 संख्या 2511/2023 के अन्तर्गत माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद द्वारा लखनऊ में पारित आदेश दिनांक 05.07.2023। निर्णीत ऋणीगण द्वारा अपनाया गया आचरण तथा रवैया आपराधिक अवमानना के दायरे में आता है, जिसके लिए उनके विरूद्ध आवश्यक कार्यवाही की जानी चाहिए। कुछ आवश्यक तथा सुसंगत तथ्य (जिससे यह स्पष्ट है कि निर्णीत ऋणी परोक्ष उद्देश्य तथा दुर्भावनापूर्ण इरादे से विधि तथा न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग कर रहे हैं) तथा जानबूझकर डिक्रीदार को लगभग 17 वर्ष पूर्व पारित तथा घोषित एवार्ड के फल प्राप्त करने से वंचित कर रहे हैं, नीचे संक्षेप में दिए गए हैं। यह सच है कि

माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद लखनऊ ने निर्णीत ऋणीगण द्वारा बहस के बाद न्यायमूर्ति आई.एस. माथुर (सेवानिवृत्त) को एकल मध्यस्थ नियुक्त किया था, जिन्होंने 12.01.2007 को निर्णय सुनाया था, जिसके विरुद्ध निर्णीत ऋणीगण द्वारा इसे रद्द करने के लिए दायर याचिका को 25.07.2012 को खारिज कर दिया गया था और उसके बाद अधिनियम की धारा 37 के तहत उनके द्वारा दायर अपील को भी माननीय उच्च न्यायालय द्वारा 30.01.2017 को खारिज कर दिया गया था। यहाँ यह इंगित करना आवश्यक है कि समझौते से संबंधित मुद्दा शून्य है और बिना किसी परिणाम के निर्णीत ऋणीगण की ओर से एकल मध्यस्थ के समक्ष उठाया गया था और उनके द्वारा खारिज कर दिया गया था। माननीय उच्च न्यायालय में निर्णीत ऋणीगण द्वारा दायर अपील खारिज होने के बाद डिक्रीदार के पास कोई विकल्प न होने के कारण वर्तमान निष्पादन मामला दायर किया गया है, क्योंकि वे एवार्ड को लागू नहीं करने और डिक्रीदार को अवैध रूप से एवार्ड के फल से वंचित करने पर अड़े हुए थे। हालाँकि, निर्णीत ऋणीगण ने परोक्ष उद्देश्य और दुर्भावनापूर्ण इरादे से, एक बहाने से दूसरे बहाने से स्थगन प्राप्त करने के लिए, विद्वान निष्पादन न्यायालय को एवार्ड निष्पादित नहीं करने दिया, इसलिए डिक्रीदार ने इसके शीघ्र निपटान के लिए माननीय उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की। माननीय उच्च न्यायालय ने दिनांक 22.10.2020 के आदेश के तहत याचिका का अंतिम रूप से इस टिप्पणी के साथ निपटारा किया है कि निष्पादन न्यायालय कार्यवाही में तेजी लाने का प्रयास करेगा। निष्पादन कार्यवाही में तेजी लाने के लिए माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 22.10.2020 के आदेश की सत्य प्रति संलग्नक A1 के रूप में दायर की जा रही है। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के बाद निष्पादन मामले की कार्यवाही में तेजी आई है और स्टांप शुल्क की कमी के संबंध में निर्णीत ऋणीगण की ओर से मुंसरिम द्वारा उठाई गई तुच्छ और निराधार आपत्ति को इस माननीय न्यायालय ने दिनांक 03.12.2020 के आदेश के तहत खारिज कर दिया, जिसकी सत्य प्रतिलिपि संलग्नक ए2 के रूप में संलग्न है। आदेश दिनांक 03.12.2020 के तहत एवार्ड की प्रमाणित प्रति डिक्रीदार द्वारा रिकॉर्ड पर लाई गई। दिनांक 02.09.2021 को निर्णीत ऋणीगण की ओर से स्वीकार्य एवार्ड के अभाव और स्टाम्प की कमी के कारण निष्पादन वाद को खारिज करने के लिए एक आवेदन (सी-28) दायर किया गया था, जिसकी सत्य प्रतिलिपि संलग्नक ए3 के रूप में संलग्न है, और उक्त आवेदन के आधार पर कार्यवाही लगभग 13 महीने के लिए स्थगित कर दी गई। अंततः इस माननीय न्यायालय ने 17.10.2022 को उक्त आवेदन को इस निर्देश के साथ खारिज कर दिया कि निर्णीत ऋणीगण को 15 दिनों के भीतर एवार्ड की पूरी राशि का भुगतान करना होगा अन्यथा वसूली की प्रक्रिया शुरू की जाएगी। इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 17.10.2022 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक ए4 के रूप में दायर की जा रही है। दिनांक 17.10.2022 के आदेश का अनुपालन करने के बजाय, निर्णीत ऋणीगण की ओर से माननीय उच्च न्यायालय में उक्त आदेश के विरुद्ध अपील दायर करने के लिए 15 दिन का समय मांगा गया, जिसे दिनांक 06.12.2022 के आदेश द्वारा अनुमति दी गई तथा मामले को 18.12.2022 तक स्थगित कर दिया गया, तथा उन्हें या तो पूरी राशि का भुगतान करने या माननीय उच्च न्यायालय का स्थगन आदेश दाखिल करने का निर्देश दिया गया। इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 06.12.2022 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A5 के रूप में दाखिल की जा रही है। स्पष्ट, श्रेणीबद्ध एवं विशिष्ट आदेश दिनांक 06.12.2022 के बावजूद न तो निर्णीत ऋणीगण ने माननीय उच्च न्यायालय से कोई आदेश लाया है और न ही एवार्ड की राशि का भुगतान किया है, तदनुसार डिक्रीदार ने कुर्की के आदेश जारी करने के लिए एक आवेदन दायर किया है, जिसके खिलाफ निर्णीत ऋणीगण की ओर से तुच्छ आपत्ति दायर की गई थी। निर्णीत ऋणी के पक्ष में पूर्वोक्त दायर आपत्ति को इस न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 07.01.2023 के तहत खारिज कर दिया, जिसकी प्रतिलिपि संलग्नक ए6 के रूप में संलग्न है। इसके बाद आवश्यकतानुसार रु. 1,13,61,004.20 का विवरण डिक्रीदार द्वारा दाखिल किया गया और

इस न्यायालय ने अमीन को कुर्की का वारंट जारी किया, जो 14.02.2023 को मौके पर गया, लेकिन आश्चर्य की बात है कि निर्णीत ऋणीगण ने उसे जरूरी काम करने की अनुमति नहीं दी, तदनुसार वह वापस आया और इस माननीय न्यायालय को रिपोर्ट प्रस्तुत की। अमीन द्वारा प्रस्तुत उक्त रिपोर्ट की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक ए 7 के रूप में यहां दाखिल की जा रही है। इसके बाद कुर्की के लिए 20.03.2023 की तारीख तय की गई, जिस दिन भी अमीन मौके पर गया। निष्पादन कार्यवाही में बाधा डालने और उसे आगे न बढ़ने देने के उद्देश्य से, निर्णीत ऋणी में से एक श्री संजय गुप्ता ने धारा 47 सी.पी.सी. के तहत आपत्ति दाखिल की, जिसे इस न्यायालय ने 01.04.2023 को खारिज कर दिया था, सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A8 के रूप में दाखिल की जा रही है, अंततः श्री संजय गुप्ता ने इस माननीय न्यायालय के खिलाफ झूठा आरोप लगाते हुए अन्तरण आवेदन दायर किया है कि उन्हें कोई विश्वास नहीं है और उन्हें न्याय नहीं मिलेगा। उक्त आवेदन की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक 9 के रूप में दाखिल की जा रही है। उक्त आवेदन का निपटारा 08.05.2023 को किया गया था। उसके बाद इस न्यायालय ने पुनः 28.05.2023 की तिथि निर्धारित करते हुए कुर्की का वारंट जारी किया है क्योंकि निर्णीत ऋणीगण ने एवार्ड की राशि जमा नहीं की है। इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 08.05.2023 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A10 के रूप में दाखिल की जा रही है। इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 01.04.2023 के आदेश के विरुद्ध, जिसमें धारा 47 सी.पी.सी. के तहत दायर आपत्ति को खारिज किया गया था, निर्णीत ऋणीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत माननीय उच्च न्यायालय में याचिका दायर की है। उक्त याचिका को इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 01.04.2023 के आदेश में हस्तक्षेप किए बिना दिनांक 05.07.2023 के आदेश द्वारा आंशिक रूप से अनुमति दी गई थी। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 05.07.2023 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A11 के रूप में दायर की जा रही है। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 05.07.2023 के आदेश के अनुपालन में, इस न्यायालय ने श्री संजय गुप्ता द्वारा एवार्ड की निष्पादनीयता के संबंध में उठाया गया मुद्दा तथा दिनांक 01.11.2023 के आदेश द्वारा उसे अस्वीकार कर दिया गया। माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 01.11.2023 के आदेश की सत्य प्रतिलिपि संलग्नक A12 के रूप में प्रस्तुत की जा रही है। निर्णीत ऋणीगण के आचरण और रवैये को ध्यान में रखते हुए डिक्रीदार ने पुलिस बल उपलब्ध कराने के लिए आवेदन किया था, जिसे स्वीकार कर लिया गया, तदनुसार पुलिस बल की सहायता से कब्जा दिलाने के वारंट के अनुसार कोर्ट अमीन ने 20.03.2024 को डिक्रीदार को कब्जा दिलाया। कोर्ट अमीन ने ताले खोलकर उसमें मिले सामान की सूची तैयार की और उसे डिक्रीदार की सुपुर्दगी में दे दिया। निर्णीत ऋणीगण ने जानबूझकर केवल डिक्रीदार को और अधिक परेशान करने और उसे नुकसान पहुंचाने के लिए उसके बार-बार अनुरोध के बावजूद उन सामानों को नहीं उठाया। इस प्रकार अब तक एवार्ड द्वारा प्रदान की गई अचल संपत्ति के संबंध में डिक्री निष्पादित की गई है (क्योंकि यह डिक्रीदार सुरेश कुमार मिश्रा से संबंधित है) लेकिन एवार्ड द्वारा उन्हें प्रदान की गई राशि का भुगतान निर्णीत ऋणीगण द्वारा नहीं किया गया है, बावजूद इसके कि इस माननीय न्यायालय द्वारा दिनांक 17.10.2022, 06.12.2022 और 08.05.2023 को आदेश पारित किए गए थे, जिन्हें माननीय उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया है, इसलिए इसे निष्पादित किया जाना है। निर्णीत ऋणीगण की मनमानी चरम पर पहुंच गई है, क्योंकि उन्होंने डिक्रीदार पर अनुचित दबाव बनाने के लिए (ताकि वह निष्पादन पर दबाव न डाले) निष्पादन मामले को खारिज करने और कब्जे की बहाली के लिए 27.05.2024 को तीसरा आवेदन दायर किया है और मामले को 3-4 महीने तक लंबित रखा है। सी-81 के रूप में क्रमांकित उक्त आवेदन के विरुद्ध डिक्रीदार द्वारा विस्तृत आपत्ति दाखिल की गई है। हालांकि निर्णीत ऋणीगण की ओर से सी-81 के निपटारे से बचने के लिए यह आरोप लगाया गया है कि आदेश 21 नियम 58 सी.पी.सी. (बी-3 के रूप में क्रमांकित) के तहत दायर उनकी आपत्ति पर पहले निर्णय लिया जाना चाहिए। उक्त आपत्ति पर 4-5 तारीखों

तक सुनवाई हुई, जिसमें निर्णीत ऋणीगण के असहयोग के कारण लगभग 4 महीने का समय व्यतीत हो गया। निर्णीत ऋणीगण ने निष्पादन वाद को खारिज करने के लिए तीसरे आवेदन सी-81 की सुनवाई और निपटान के लिए इस न्यायालय को अनुमति नहीं देने के उद्देश्य से अब सोसायटी पंजीकरण अधिनियम की धारा 5-ए के तहत निहित प्रतिबंध के आधार पर निष्पादन वाद को खारिज करने के लिए चौथा आवेदन दायर किया है, जो वर्तमान मामले में बिल्कुल भी लागू नहीं है। जहां तक निर्णीत ऋणीगण द्वारा सोसायटी पंजीकरण अधिनियम की धारा 5-ए के तहत निहित प्रावधान की दलील/प्रतिबंध का संबंध है, यह पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण, परेशान करने वाला है और माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 16 और 4, आदेश 2 नियम 2 सीपीसी की धारा 11 स्पष्टीकरण IV के तहत किए गए प्रावधानों के विरुद्ध है। अब अपने स्वयं के आचरण से निर्णीत ऋणीगण ने ऐसा अभिवचन लेने के अपने अधिकार का अधित्यजन कर दिया है। वैसे भी सोसायटी पंजीकरण अधिनियम की धारा 5 ए के तहत किए गए प्रावधान वर्तमान मामले में लागू नहीं होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि या तो निर्णीत ऋणीगण ने उक्त प्रावधान को ठीक से नहीं पढ़ा है या जानबूझकर इसकी गलत व्याख्या की है ताकि निष्पादन कार्यवाही में अनावश्यक बाधा उत्पन्न हो। वास्तव में निर्णीत ऋणीगण द्वारा झूठी, तुच्छ और परेशान करने वाला अभिवचन केवल डिक्रीदार को दी गई राशि के भुगतान से बचने के उद्देश्य से दिया जा रहा है, जबकि उन्होंने सभी उपचारों का उपयोग कर लिया है और हार गए हैं। आवेदन में लगाए गए आरोप दर्शाते हैं कि कैसे एक दृढ़ निश्चयी और बेईमान वादी न्यायिक निर्णय के परिणाम को विफल करने के लिए मुकदमेबाजी को बीच-बीच में खींच सकता है। मुकदमेबाजी का इतिहास निर्णीत ऋणीगण की ओर से शापितता और सद्भावना की कमी के अलावा कुछ नहीं दिखाता है जो न केवल निंदा के योग्य है बल्कि उन पर अनुकरणीय हर्जा लगाने के योग्य है। उन्हीं तथ्यों और परिस्थितियों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने टिप्पणी की है कि न्यायालयों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बेईमान वादी अपने दुर्भावनापूर्ण तरीकों से डिक्री धारकों को डिक्री का लाभ देने से वंचित न कर सकें। इतना ही नहीं माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि वादियों की एक नई नस्ल उभरी है, जो सत्य और न्यायालय के आदेशों का सम्मान नहीं करती। वे बेशर्मी से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए झूठ और अनैतिक साधनों का सहारा लेते हैं। यह अब अच्छी तरह से स्थापित हो चुका है कि जो वादी न्याय की धारा को प्रदूषित करने का प्रयास करते हैं या जो दागी हाथों से न्याय के शुद्ध स्रोत को छूते हैं, वे किसी भी राहत के अधिकारी नहीं हैं। वास्तव में चूंकि निर्णीत ऋणी न्यायालय को गुमराह करने का प्रयास कर रहे हैं, इसलिए वे आगे सुनवाई के अधिकारी नहीं हैं। ऐसी प्रवृत्ति को गंभीरता से लिया जाना चाहिए और उचित आदेश पारित करके तथा अनुकरणीय हर्जा लगाने सहित आवश्यक निर्देश जारी करके इसे रोका जाना चाहिए। इसके अलावा, उक्त आवेदन पूरी तरह से गलत है, गुणागुण से रहित है और सामान्य नियम सिविल के नियम 28 के तहत किए गए प्रावधान के दृष्टिगत बनाए रखने योग्य नहीं है। केवल इस आधार पर आवेदन खारिज किए जाने योग्य है। उक्त आवेदन के पैरा 1 की विषय-वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और काल्पनिक है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस तरह के तुच्छ और परेशान करने वाले आवेदन को दाखिल करने से पहले निर्णीत ऋणीगण ने माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 4 और 16 के तहत किए गए प्रावधानों और इस मुद्दे पर एकल मध्यस्थ द्वारा दिए गए निष्कर्ष को नहीं पढ़ा है कि समझौता निरस्त नहीं है, अन्यथा ऐसा कोई मृत मुद्दा नहीं उठाया जाता जो कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग के अलावा और कुछ नहीं है। उक्त आवेदन के पैरा 2 की विषय-वस्तु को केवल इस सीमा तक स्वीकार किया जाता है कि 10.11.1996 को चार पक्षों के बीच समझौता निष्पादित किया गया था, शेष को अस्वीकार किया जाता है। उक्त आवेदन के पैरा 3 की विषय-वस्तु गलत है और अस्वीकार की जाती है। यह प्रस्तुत किया गया है कि उठाया गया मुद्दा माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक तय हो चुका है। उक्त

आवेदन के पैरा 4 और 5 की विषय-वस्तु पर भरोसा करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि समझौते के खंड 6 में किए गए कथनों को इसमें पुनः प्रस्तुत किया गया है। हालांकि यह भी कहा गया है कि निर्णीत ऋणीगण ने या तो समझौते के खंड 9 को गलत समझा या हमेशा की तरह जानबूझकर उसकी गलत व्याख्या की। उक्त आवेदन के पैरा 6 की विषय-वस्तु को केवल इस सीमा तक स्वीकार किया जाता है कि डिक्रीदार ने स्वयं तथा सोसायटी की ओर से समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं, बाकी को अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है जैसा कि आरोप लगाया गया है। उक्त आवेदन के पैरा 7 की विषय-वस्तु पूर्णतः गलत, दुर्भावनापूर्ण तथा समझौते की गलत व्याख्या पर आधारित है, अतः इसे अस्वीकार किया जाता है। उक्त आवेदन के पैरा 8 की विषय-वस्तु को केवल इस सीमा तक स्वीकार किया जाता है कि सोसायटी सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के तहत पंजीकृत थी, शेष को अस्वीकार किया जाता है। उक्त आवेदन के पैरा 9 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत और योग्यता से रहित है, इसलिए इसे अस्वीकार कर दिया गया है। वास्तव में, निर्णीत ऋणीगण ने न्यायालय का कीमती समय बर्बाद करने के लिए समझौते को पूरी तरह से पढ़े और समझे बिना सोसायटी पंजीकरण अधिनियम की धारा 5 ए के तहत किए गए प्रावधान की पूरी तरह से गलत व्याख्या पर आवेदन दायर किया है। निर्णीत ऋणीगण ने अवैध रूप से उक्त प्रावधान को लागू करने की कोशिश की है जो बिल्कुल भी लागू नहीं है। अन्यथा भी निर्णीत ऋणीगण को पहले उक्त समझौते के आधार पर प्राप्त लाभों को पूर्ववत करने और फिर समझौते की वैधता के खिलाफ उंगली उठाने की आवश्यकता होनी चाहिए। उक्त आवेदन के पैरा 10 की विषय-वस्तु का उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है। तथापि यह भी कहा गया है कि सामान्य नियम सिविल के नियम 28 के अनुसार कानून का तर्क नहीं दिया जाना चाहिए। उक्त आवेदन के पैरा 11 और 12 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और बिना किसी आधार के है, इसलिए इसे अस्वीकार कर दिया गया है। अन्यथा भी निर्णीत ऋणीगण के पास कानून के उल्लंघन का तर्क देने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि उनके साथ कोई पक्षपात नहीं किया गया है। वास्तव में वे बिना किसी दायरे के नहीं आए हैं और पीड़ित व्यक्ति की सीमा और उनके लिए कोई कार्रवाई का कारण उत्पन्न नहीं हुआ है। यह फिर से दोहराया जाता है कि सोसायटी पंजीकरण अधिनियम की धारा 5 ए के तहत किए गए प्रावधान वर्तमान मामले में बिल्कुल भी लागू नहीं होते हैं, लेकिन किसी भी तरह से निष्पादन कार्यवाही में और देरी करने के लिए, तुच्छ आवेदन दायर किया गया है जो भारी हर्जा के साथ खारिज करने योग्य है। उक्त आवेदन के पैरा 13 की विषय-वस्तु को जानकारी के अभाव में अस्वीकार किया गया है। यह भी कहा गया है कि निर्णीत ऋणीगण ने उप रजिस्ट्रार के कार्यालय द्वारा कथित रूप से प्रदान की गई जानकारी को गलत तरीके से उद्धृत और गलत व्याख्या किया है, जो कानूनी रूप से स्वीकार्य नहीं है। उक्त आवेदन के पैरा 14 से 16 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और योग्यता से रहित है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया जाता है कि मध्यस्थ के पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था और अनुबंध अधिनियम की धारा 23 के अर्थ के भीतर समझौता शून्य है। वास्तव में उत्तर के तहत पैरा में लगाए गए आरोप पहले लगाए गए निराधार आरोपों की पुनरावृत्ति के अलावा और कुछ नहीं हैं, जिनका पहले ही स्पष्ट रूप से खंडन किया जा चुका है। ऐसा प्रतीत होता है कि निर्णीत ऋणी केवल आवेदन को गंभीर बनाने के लिए एक ही आरोपों को बार-बार दोहरा रहे हैं, जिसकी अनुमति नहीं दी जा सकती। उक्त आवेदन के पैरा 17 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और योग्यता से रहित है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि या तो निर्णीत ऋणीगण ने समझौते के खंड 6 और इसके तहत किए गए प्रावधानों को गलत समझा है। सोसायटी पंजीकरण अधिनियम की धारा 5ए का उल्लंघन करना या अपने स्वार्थ के लिए जानबूझकर उसकी गलत व्याख्या करना। उक्त आवेदन के पैरा 18 और 19 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और गुमराह करने वाली है, इसलिए इसे अस्वीकार

किया जाता है। यह भी कहा गया है कि निर्णीत ऋणी परोक्ष उद्देश्य और दुर्भावनापूर्ण इरादे से अवैध रूप से सोसायटी पंजीकरण अधिनियम की धारा 5 ए के तहत निहित प्रावधान को लागू करने का प्रयास कर रहे हैं, जो वर्तमान मामले में बिल्कुल भी लागू नहीं है। अन्यथा भी इस स्तर पर माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 16, 4 और 5 के तहत किए गए स्पष्ट प्रावधान को देखते हुए ऐसी कोई आपत्ति नहीं उठाई जा सकती है और इसे माफ कर दिया गया माना जाता है। उक्त आवेदन के पैरा 20 की विषय-वस्तु को जैसा कहा गया है, वैसा स्वीकार नहीं किया जाता। हालांकि, यह भी कहा गया है कि यदि समझौता शून्य था, तो निर्णीत ऋणीगण को मामले में आगे की कार्यवाही के बिना इसके अनुसरण में लिए गए लाभ को वापस करने का निर्देश दिया जाना चाहिए। इस आशय के आरोप कि चूंकि समझौता अवैध है, इसलिए मध्यस्थता खंड को कभी अस्तित्व में नहीं माना जाता है, पूरी तरह से गलत और असत्य है, इसलिए इनकार किया जाता है। उक्त आवेदन के पैरा 21 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, असत्य और योग्यता से रहित है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि उत्तर के तहत पैरा में लगाए गए आरोपों से यह स्पष्ट है कि या तो निर्णीत ऋणीगण को मध्यस्थता के कानून, अनुबंध अधिनियम और संपत्ति अन्तरण अधिनियम के तहत किए गए प्रावधानों के बारे में पता नहीं है या जानबूझकर इसे गलत तरीके से पढ़ना और गलत व्याख्या करना। निराधार और अप्रासंगिक आरोप लगाते समय निर्णीत ऋणी माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 16, 4 और 5 के तहत निहित प्रतिबंधों और इस विषय पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखने में पूरी तरह विफल रहा। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि माननीय एकल मध्यस्थ द्वारा बनाया और घोषित किया गया एवार्ड तर्कपूर्ण, अच्छी तरह से सुविचारित है और पूरी तरह से कानून के अनुरूप नहीं है। उक्त आवेदन के पैरा 22 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत, दुर्भावनापूर्ण और योग्यता से रहित है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया जाता है कि एस्टोपल, वेवर और रेस-ज्यूडिकाटा का सिद्धांत वर्तमान मामले में लागू नहीं होता है। यह आरोप कि समझौता शून्य है, पूरी तरह से निराधार, पूरी तरह से बेईमान अभिवाक है और निर्णीत ऋणीगण के लिए उपलब्ध नहीं है अन्यथा वे उक्त समझौते से प्राप्त लाभ को वापस करने के लिए बाध्य हैं। यह स्थापित कानूनी स्थिति है कि कोई भी व्यक्ति एक साथ नहीं हो सकता है। उक्त आवेदन के पैरा 23 की विषय वस्तु पूरी तरह से गलत है, इसमें कोई तथ्य नहीं है और इसमें कोई बल नहीं है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। एवार्ड पर चुकाई गई स्टाम्प ड्यूटी पर्याप्त है। वैसे भी इस मुद्दे पर माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को अंतिम माना जाता है, इसलिए इस माननीय न्यायालय द्वारा इसकी जांच नहीं की जा सकती। उक्त आवेदन के पैरा 24 की विषय-वस्तु पूरी तरह से गलत और भ्रामक है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। संदर्भित निर्णय और निर्णीत ऋणीगण द्वारा प्रतिउत्तर के पैरा में भरोसा किया गया है, न तो लागू है और न ही उन्हें कोई मदद करता है। वास्तव में प्रतिउत्तर के पैरा में लगाए गए आरोप न केवल गलत हैं बल्कि अवमाननापूर्ण भी हैं, जिसके लिए डिक्रीदार अलग कार्यवाही शुरू करने का इरादा रखता है। कुछ निर्णयों का हवाला देने के अलावा (जो मामले में लागू नहीं हैं) निर्णीत ऋणी यह इंगित करने में पूरी तरह विफल रहे कि मध्यस्थ, विद्वान जिला न्यायाधीश, माननीय उच्च न्यायालय के पास क्षेत्राधिकार क्यों नहीं था और यदि ऐसा है तो उन्होंने माननीय न्यायालय का दरवाजा क्यों खटखटाया। यह प्रस्तुत किया गया है कि यदि विद्वान जिला न्यायाधीश और माननीय उच्च न्यायालय का निर्णय उनके पक्ष में होता तो निर्णीत ऋणी खुश होते और क्षेत्राधिकार की कमी के बारे में ऐसा कोई आरोप नहीं लगाया जाता। निर्णीत ऋणीगण का आचरण और मामले की परिस्थितियां इस बात की बहुत गवाही देती हैं कि वे किस तरह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग कर रहे हैं और न्यायिक आदेशों के खिलाफ काम कर रहे हैं। निर्णीत ऋणी कोई प्रावधान या कानून नहीं दिखा पाए जिसके तहत उन्होंने उक्त आवेदन दायर किया है। वास्तव में न तो

उनके पास ऐसा आवेदन दायर करने का अधिकार है और न ही कार्रवाई का कारण, क्योंकि वे पीड़ित व्यक्ति की परिभाषा में नहीं आते हैं। इसके अलावा, समझौते से उन्हें कोई नुकसान नहीं हुआ है, दूसरी ओर समझौते के अनुसरण में उन्हें नवनिर्मित परिसर में अपना हिस्सा मिला है, जिसमें से उन्होंने कुछ हिस्से हस्तांतरित कर दिए हैं। चूंकि उन्होंने उसी समझौते से लाभ प्राप्त किया है और उसका आनंद ले रहे हैं, इसलिए उनके लिए ऐसा करना संभव नहीं है। निष्पादन के चरण में समझौते पर तब तक अभियोग लगाया जाएगा जब तक कि विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 43 के तहत किए गए प्रावधान के अनुसार उससे प्राप्त लाभ की वापसी न हो जाए। इसके अलावा, दिनांक 27.08.1999 के आदेश द्वारा, निर्णीत ऋणीगण के पूर्ववर्ती और बिल्डर को उत्तरी ब्लॉक की पूरी पहली मंजिल, ऊपरी भूतल के सामने के आधे हिस्से और दूसरी मंजिल पर बिक्री, बुकिंग, अन्तरण या किसी भी तरह से स्वामित्व या हित बनाने से रोक दिया गया था। उक्त आदेश की सत्य प्रतिलिपि अनुलग्नक ए-13 के रूप में दाखिल की जा रही है। उपर्युक्त के दृष्टिगत न्याय के हित में यह आवश्यक और समीचीन है कि निर्णीत ऋणीगण द्वारा प्रस्तुत तुच्छ और तंग करने वाले आवेदन को अस्वीकार कर दिया जाए और बिना किसी और देरी के निष्पादन आवेदन में उल्लिखित निर्णीत ऋणीगण की संपत्ति की नीलामी बिक्री द्वारा निर्णीत ऋणी से एवार्ड द्वारा दी गई राशि की वसूली की जाए।

8. निर्णीत ऋणी सं० 1 की ओर से उत्तर सी-95 मय शपथ पत्र सी-96 प्रस्तुत करते हुए यह कथन किया गया है कि आपत्तियों के पैराग्राफ नंबर 1 की विषय वस्तु वर्तमान कार्यवाही में परेशान करने वाली, तुच्छ और अनुचित है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। कपट सबसे गंभीर कार्य को भी दूषित कर देती है और किसी मामले में सच्चाई की खोज करना हर न्यायालय का कर्तव्य है, जिसके लिए न्यायालय को भूसा से अनाज निकालना होगा और संदिग्ध लोगों को तितर-बितर करना होगा, धूल के धब्बे को हटाना होगा क्योंकि ये चीजें सच्चाई को अवरुद्ध करती हैं। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि निर्णीत ऋणीगण ने 12.01.2007 के एवार्ड को अमान्य घोषित करके सही तरीके से चुनौती दी है, जहां तक यह डिक्रीदार - सुरेश कुमार मिश्रा को दिये गये अनुतोष से संबंधित है। इसके अलावा, यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि एक शून्य संविदात्मक लेनदेन को आगे बढ़ाने के लिए पारित एवार्ड/डिक्री पर आपत्ति निष्पादन के स्तर पर या यहां तक कि संपार्श्विक कार्यवाही में अधिकार क्षेत्र की अंतर्निहित कमी और शून्यता के आधार पर की जा सकती है। इसके अलावा, डिप्टी रजिस्ट्रार, चिट्स, फंड्स एंड सोसाइटीज द्वारा प्रदान की गई जानकारी और साथ ही डिक्रीदार द्वारा स्वयं दायर दिनांक 17.10.2024 की आपत्तियों से यह स्पष्ट है कि कानून द्वारा अनिवार्य रूप से धारा 5-ए के तहत कोई अनुमति नहीं ली गई है, जिसके विफल होने पर सोसाइटी (डिक्रीदार - सुरेश कुमार मिश्रा द्वारा सोसाइटी के अधिकृत प्रतिनिधि/हस्ताक्षरकर्ता के रूप में कार्य करते हुए) द्वारा डिक्रीदार - सुरेश कुमार मिश्रा को स्वयं अचल संपत्ति का अन्तरण, जैसा कि दिनांक 10.11.1996 के समझौते के पेज संख्या 9 पर निहित खंड 6 में स्पष्ट रूप से प्रावधान किया गया है, सोसाइटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1860 (यूपी अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए की उप-धारा 2 के तहत निहित प्रतिबंध के अंतर्गत आता है। परिणामस्वरूप, डिक्रीदार - सुरेश कुमार मिश्रा द्वारा अवैध और कपट से किया गया संपूर्ण लेनदेन तथा उसके द्वारा प्राप्त धन डिक्री के रूप में परिणामी लाभ, प्रारंभ से ही शून्य हैं। यह स्पष्ट करना भी उचित है कि निर्णीत ऋणी द्वारा दायर आवेदन के पैराग्राफ संख्या 9 और 13 की विषय वस्तु के जवाब में, (जिसमें यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि न तो डिक्रीदार और न ही सोसायटी ने कभी विद्वान जिला न्यायाधीश की पूर्व स्वीकृति प्राप्त की है), डिक्रीदार ने इसे स्पष्ट रूप से नकारने के अलावा कहा है कि उसे इस बारे में कोई जानकारी नहीं है कि पूर्व स्वीकृति कभी अनुमोदन प्राप्त किया गया था या नहीं, यह दावा नहीं किया गया कि ऐसी स्वीकृति प्राप्त की गई थी। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि समझौते में लेनदेन, जहां तक यह सोसायटी से डिक्रीदार को अचल

संपत्तियों के अन्तरण से संबंधित है, कानून की दृष्टि में शून्य और अमान्य है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 2 की विषय-वस्तु को उसी तरह से अस्वीकार किया जाता है जिस तरह से उन्हें बताया गया है। हालांकि, यह स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया जाता है कि सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत निहित प्रावधानों का पालन करने में विफलता के कारण 10.11.1996 के समझौते के संबंध में आपत्तियां कभी भी मध्यस्थ के समक्ष उठाई गई थीं। डिक्रीदार ने इस माननीय न्यायालय को यह विश्वास दिलाने के लिए गुमराह करने का प्रयास किया है कि ऐसी आपत्तियों का निर्णय मध्यस्थता कार्यवाही में किया गया है। इस प्रकार, डिक्रीदार को इसका कठोर प्रमाण प्रस्तुत करना चाहिए। आपत्तियों के पैराग्राफ नंबर 3 की विषय वस्तु अवैध, तुच्छ और पूरी तरह से गलत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। 12.01.2007 का एवार्ड शून्य है, जहां तक यह डिक्रीदार सुरेश कुमार मिश्रा को दी गई राहत से संबंधित है, क्योंकि यह एक शून्य अनुबंध पर पारित किया गया था, जो अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र की कमी से ग्रस्त है, इसलिए इसे निष्पादित नहीं किया जा सकता है। वास्तव में, निर्णीत ऋणीगण को तब तक प्रतिपूर्ति की जानी चाहिए जब तक कि अचल संपत्ति अवैध रूप से डिक्रीदार को सौंप दी गई हो। आपत्तियों के पैराग्राफ नंबर 4 की विषय वस्तु फिर से असत्य, अवैध और इस माननीय न्यायालय को गुमराह करने का प्रयास है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। माननीय उच्च न्यायालय ने दिनांक 22.10.2020 के आदेश के माध्यम से इस माननीय न्यायालय को इन कार्यवाहियों में तेजी लाने का निर्देश देने वाला कोई आदेश पारित नहीं किया है और वास्तव में, याचिका का निपटारा केवल डिक्रीदार को इस न्यायालय के समक्ष शीघ्र निपटारे की मांग करने वाली एक आवेदन प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता प्रदान करके किया गया था। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 5 से 13 की विषय वस्तु असत्य, गलत और अवैध है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। हालांकि, यह स्वीकार किया जाता है कि मुंसरिम ने एवार्ड पर स्टाम्प ड्यूटी में कमी को सही ढंग से इंगित किया है। इसके अलावा, आज तक गुणागुण के आधार पर स्टाम्प ड्यूटी की कमी के संबंध में आपत्तियों पर कोई निर्णय नहीं हुआ है। हालांकि, अनुच्छेद 227 संख्या 2511/2023 में माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर, जिसमें माननीय उच्च न्यायालय ने माना था कि स्टाम्पिंग का मुद्दा रिस जूडीकेटा के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने (2024) 6 एससीसी 1 में "मध्यस्थता और सुलह अधिनियम 1996 और भारतीय स्टाम्प अधिनियम 1899 के तहत मध्यस्थता समझौतों के बीच परस्पर क्रिया" में माना है कि किसी उपकरण की स्टाम्पिंग के बारे में मुद्दा एक क्षेत्राधिकार संबंधी मुद्दा है और मामले की जड़ तक जाता है। इसलिए, उपर्युक्त संदर्भ में, जहां कानूनी स्थिति में बाद में बदलाव होता है, वहां किसी स्टाम्प शुल्क की कमी के संबंध में आपत्ति के खिलाफ कोई रिस जूडीकेटा नहीं हो सकता है, जो निस्संदेह एक क्षेत्राधिकार संबंधी मुद्दा है, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एरच बोमन खावर बनाम तुकाराम श्रीधर भट और अन्य, (2013) 15 एससीसी 655 और मथुरा प्रसाद बाजू जायसवाल और अन्य बनाम दोसीबाई एन. बी. जीजीभॉय, (1970) 1 एससीसी 613 में, इसे स्पष्ट रूप से निम्नानुसार माना गया है:

"A question relating to the jurisdiction of a Court cannot be deemed to have been finally determined by an erroneous decision of the Court. If by an erroneous interpretation of the statute the Court holds that it has no jurisdiction, the question would not, in our judgment, operate as res judicata. Similarly, by an erroneous decision if the Court assumes jurisdiction which it does not possess under the statute, the question cannot operate as res judicata between the same parties, whether the cause of action in the subsequent litigation is the same or otherwise."

आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 14 और 15 की विषय-वस्तु भी अवैध, परेशान करने वाली, त्रुटिपूर्ण और गलत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। हालांकि यह प्रस्तुत किया जाता है कि, जब दिनांक 12.01.2007 का एवार्ड और दिनांक 10.11.1996 का समझौता डिक्रीदार के लिए सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत निहित अनिवार्य प्रावधानों का पालन न करने के कारण अमान्य हो जाता है, तो डिक्रीदार द्वारा इस माननीय न्यायालय को धोखा देकर प्राप्त किए गए सभी लाभ बिना शर्त वापस लिए जाने योग्य हैं और निर्णीत ऋणीगण को आवश्यक प्रतिपूर्ति प्रदान की जा सकती है। आपत्तियों के पैराग्राफ 16 और 17 की विषय वस्तु निराधार, अवैध, तुच्छ और विरोधाभासी है, इसलिए अस्वीकार की जाती है। ऐसा प्रतीत होता है कि डिक्रीदार ने मुद्दे को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करने के लिए तुच्छ कथन किए हैं, जिनका उससे कोई संबंध नहीं है। दिनांक 27.05.2024 को खारिज करने के लिए आवेदन (सी-81) इस आधार पर खारिज करने की मांग करते हुए दायर किया गया है कि एवार्ड अपंजीकृत है और इसके बल पर कोई अचल संपत्ति डिक्रीदार को नहीं सौंपी जा सकती थी। वर्तमान आवेदन में उठाया गया मुद्दा उक्त मुद्दे से पूरी तरह अलग है। इसके अलावा, सिविल प्रक्रिया संहिता, (बी-3) के आदेश XXI नियम 58 के तहत दायर आवेदन को इस माननीय न्यायालय द्वारा संपत्तियों की कुर्की में किसी भी बाधा से बचने के लिए पहले ही निपटा दिया गया है। फिर भी, वर्तमान मुद्दा सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत निहित अनिवार्य प्रावधानों के अनुपालन न करने के मद्देनजर, शून्य और निरर्थक होने के आधार पर एवार्ड पर आक्षेप करता है और यदि इसे बरकरार रखा जाता है, तो पूरे निष्पादन की कार्यवाही को छोड़ दिया जाएगा। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 19 और 20 की विषय वस्तु निराधार, परेशान करने वाली, प्रतीकात्मक है और वास्तव में डिक्रीदार के आचरण के विपरीत है, जिसने विभिन्न मंचों के समक्ष कपट की है, इसलिए इनकार किया जाता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान कार्यवाही का किसी भी तरह से डिक्रीदार द्वारा इस माननीय न्यायालय द्वारा कानून के स्पष्ट प्रावधानों द्वारा निषिद्ध लेनदेन करने के लिए दुरुपयोग नहीं किया जा सकता है। सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत निहित प्रावधानों का विधायी उद्देश्य, बेईमान और शरारती व्यक्तियों जैसे कि डिक्रीदार को सोसाइटी में निहित संपत्ति को धोखे से प्राप्त करने से बचाना है। सबसे पहले, डिक्रीदार ने कपट को जारी रखते हुए स्वयं किसी भी वैध प्राधिकार के बिना सोसाइटी के प्रतिनिधि के रूप में कार्य किया है और उसके बाद सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत विद्वान जिला न्यायाधीश की अनुमति के बिना सोसाइटी में निहित संपत्ति को अवैध रूप से हस्तांतरित कर दिया है। दूसरे, अपने परोक्ष उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए उसने सोसाइटी की संपूर्ण परिसंपत्तियों को कपट से हड़पने के बाद यह छिपाकर कि संबंधित सोसाइटी का पंजीकरण कभी नवीनीकृत नहीं किया गया था, सोसाइटी की संपूर्ण परिसंपत्तियों को हड़प लिया है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 21 की विषय वस्तु अवैध, अस्पष्ट है और इस मुद्दे पर कोई असर नहीं डालती है, इसलिए इसे अस्वीकार कर दिया गया है। यह स्थापित कानून है कि कोई आपत्ति जो अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र की कमी पर प्रहार करती है या लेनदेन/आदेश/डिक्री को कानून की दृष्टि में शून्य होने पर प्रहार करती है, उसे किसी भी मंच पर, किसी भी स्तर पर और यहां तक कि संपार्श्विक कार्यवाही में भी बहुत अच्छी तरह से उठाया जा सकता है। जहां तक डिक्रीदार के पक्ष में दी गई राहत का सवाल है, संबंधित एवार्ड शून्य है, क्योंकि इसके तहत सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के तहत अनिवार्य अनुमतियां प्राप्त करने में विफलता हुई है। इसके अलावा, उपरोक्त क़ानून में बाद के उप-प्रावधानों में स्पष्ट रूप से सभी ऐसी कटौती को शून्य माना गया है, इसलिए, अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र की कमी और समझौते के साथ-साथ इसके नियमों में पारित एवार्ड के शून्य होने

के संबंध में, निर्णीत ऋणीगण द्वारा उठाई गई आपत्तियों को इस न्यायालय द्वारा बहुत अच्छी तरह से निपटाया जा सकता है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 22 की विषय-वस्तु अस्पष्ट, तुच्छ, गलत है तथा इसका वर्तमान मुद्दे से कोई संबंध नहीं है, अत: इसे अस्वीकार किया जाता है। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि, मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 4 में निहित प्रावधान केवल 1996 के अधिनियम के भाग-I या मध्यस्थता समझौते/खंड के तहत प्रदान की गई आवश्यकताओं के संबंध में अधिकारों के अधित्याग तक सीमित हैं, जबकि सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 जैसे विशेष क़ानूनों के तहत निहित अनन्य अधिदेश को नहीं छूते हैं। इस प्रकार, एक विशेष क़ानून (एक विशिष्ट राज्य संशोधन द्वारा संरक्षित) में प्रदान किए गए एक स्पष्ट अधिदेश को 1996 के अधिनियम की धारा 4 की आड़ में कपट से दरकिनार करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसी तरह, मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 16 के तहत निहित प्रावधान, जो एक मध्यस्थ न्यायाधिकरण को अपने क्षेत्राधिकार पर शासन करने की शक्तियां प्रदान करता है और उसी की उप-धारा 3, अछूती और अप्रभावी रहती है, यदि एवार्ड को सोसाइटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1860 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए की उप-धारा 2 के मद्देनजर पूरे लेनदेन के शून्य और शून्य होने के आधार पर चुनौती दी जा रही है। धारा 5-ए के तहत अनिवार्य पूर्व अनुमोदन किसी सोसायटी से उसके किसी भी सदस्य या किसी अजनबी को अचल संपत्ति के किसी भी अन्तरण को प्रभावित करने के लिए अनिवार्य है और इसके अभाव में किसी लेनदेन को ऐसे लेनदेन के बाद अनुमति प्राप्त करके कानून की नजर में भी अधिकृत नहीं किया जा सकता है (तुलसी राम पटोदिया बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 2015 एससीसी ऑनलाइन All 7621: (2015) 127 आरडी 731: (2015) 149 एआईसी 924: (2015) 109 एएलआर 783; रमेश चंद्र बनाम श्यामजी मिश्रा, 2014 एससीसी ऑनलाइन All 8875: (2015) 126 आरडी 294: (2014) 106 एएलआर 837: (2014 यू.पी. 2011 एससीसी ऑनलाइन All 2791: (2012) 49 वीएसटी 252 और राजनाथ मिश्रा बनाम दशम् अतिरिक्त जिला जज, वाराणसी 1991 एससीसी ऑनलाइन All 970: 1991 ALJ 486: (1991) 1 एडब्ल्यूसी 664: 1991 आरडी 253)। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि 1860 के अधिनियम की धारा 5-ए का पालन न करना महज एक अनियमितता नहीं है जिसे पक्षों के आचरण से पुष्टि की जा सकती है, बल्कि वास्तव में एक अवैधता है जिसे एक स्पष्ट छूट या स्वीकृति भी त्याग नहीं सकती है। (कृष्ण लाल बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य (1994) 4 एससीसी 422: 1994 एससीसी (एल एंड एस) 885; चिरंजीलाल श्रीलाल गोयनका बनाम जसजीत सिंह (1993) 2 एससीसी 507; सुशील कुमार मेहता बनाम गोबिंद राम वोहरा (मृत) द्वारा एलआर (1990) 1 एससीसी 193; राम सिंह बनाम गंधार कृषि सहकारी सेवा सोसायटी, गंधार 1974 एससीसी ऑनलाइन पी 7 एच 236: एआईआर 1976 पी एंड एच 94: 1984 आरआरआर 415)। इसके अतिरिक्त, यह भी स्थापित कानून है कि यदि कोई डिक्री या पंचाट कानून की अनिवार्य प्रक्रिया का पालन करने में विफलता के कारण गलत है, या जहां फोरम जो ऐसी डिक्री या आदेश पारित करता है, के पास कभी अंतर्निहित क्षेत्राधिकार नहीं था, तो उसके अमान्य और निरर्थक होने के कारण, एस्टोपल के सिद्धांत और रिस-ज्युडिकेटा के सिद्धांत की कोई भूमिका नहीं है और ऐसी आपत्ति किसी भी स्तर पर उठाई जा सकती है। केनरा बैंक बनाम एन.जी. सुब्बाराय शेट्टी और अन्य (2018) 16 एससीसी 228; सेल्स टैक्स कमिश्नर बनाम सरजू प्रसाद राम कुमार (1976) 37 एसटीसी 533: 1972 एससीसी ऑनलाइन एससी 3; रामलाल हरगोपाल बनाम किसनचंद्र और अन्य 1923 एसीसी ऑनलाइन पीसी 46: (1924) 19 एलडब्ल्यू 549 (पीसी) और गोविंददास बनाम परमेश्वरीदास (पूर्ण पीठ) 1957 एससीसी ऑनलाइन एमपी 69: आईएलआर 1957 एमपी 223)। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 23 की विषय-वस्तु में किसी भी बात का स्पष्ट रूप से खंडन नहीं किया गया है, जो कि निर्णीत ऋणी द्वारा दाखिल आवेदन के पैराग्राफ संख्या 2 की संपूर्ण विषय-वस्तु को स्वीकार करने के बराबर होगा। निर्णीत

ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ संख्या 2 की विषय-वस्तु को दोहराते हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 24 की विषय वस्तु अवैध, असत्य, परेशान करने वाली और गलत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। निर्णीत ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ संख्या 3 की विषय वस्तु को दोहराते हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 25 की विषय-वस्तु को किसी भी तरह से अस्वीकार नहीं किया गया है, जो स्वीकार करने के बराबर होगा। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि निर्णीत ऋणीगण ने समझौते के खंड 9 के संबंध में कोई कथन नहीं किया है। जबकि, समझौते में दिए गए नियमों, विशेष रूप से खंड 6 को पढ़ने से स्पष्ट होता है कि समिति (सोसाइटी) ने स्वयं ही प्रस्तावित इमारत के पहले तल और सामने के ऊपरी तल के आधे हिस्से को (उस तिथि तक) डिक्रीदार को आवंटित (हस्तांतरित) करने का संकल्प लिया है। इसका अर्थ है कि अचल संपत्तियों के अविभाजित हिस्से जो सोसायटी के अधिकारिक स्वामित्व में थे, डिक्रीदार को हस्तांतरित कर दिए गए हैं, जो कि सोसायटी और डिक्रीदार (जो सोसायटी के प्रबंधक थे) के बीच केवल प्रतिफल के आदान-प्रदान से और पुष्ट होता है, अर्थात, 'अतीत में दी गई उनकी सेवाओं के बदले में'। इसके अलावा, यहाँ यह बताना भी उचित है कि पूरे समझौते को ध्यान से देखने पर यह भी पता चलता है कि, डिक्रीदार और निर्णीत ऋणी के बीच कोई प्रतिफल का आदान-प्रदान नहीं हुआ है, जिसका अर्थ है कि डिक्रीदार और निर्णीत ऋणी के बीच परिसंपत्तियों का कोई अन्तरण नहीं हुआ है, बल्कि केवल सोसायटी और डिक्रीदार के बीच हुआ है। हालाँकि, विद्वान जिला न्यायाधीश की पूर्व स्वीकृति के बिना पूरे अन्तरण को अमान्य बनाता है। निर्णीत ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ संख्या 4 और 5 की विषय वस्तु को दोहराते हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 26 की विषय वस्तु अवैध, कपटपूर्ण, गलत, अत्यधिक संदिग्ध और आपत्तिजनक है और सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के प्रावधानों के तहत, इस प्रकार से इनकार किया जाता है। यह भी कहा गया है कि, बेशक सोसायटी की ओर से और खुद की ओर से कार्य करते हुए, डिक्रीदार ने शरारती तरीके से सोसायटी को छोड़ दिया है और इसकी पूरी संपत्ति पर कब्जा कर लिया है। धारा 5-ए का अनुपालन न करने के साथ ही यह डिक्रीदार द्वारा की गई कपट के लिए पर्याप्त है। निर्णीत ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ संख्या 6 की विषय वस्तु को दोहराते हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 27 की विषय-वस्तु फिर से अस्पष्ट, संदिग्ध, अवैध और डिक्रीदार के दावों के विपरीत है, जिसने हमेशा अचल संपत्तियों के संबंध में स्वामित्व अधिकारों का दावा किया है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। इसके अस्वीकार किए जाने के मद्देनजर, यह माना जाएगा कि डिक्रीदार ने स्वीकार किया है कि उसने न तो अचल संपत्तियों के स्वामित्व या स्वत्व का दावा किया है, न ही कभी ऐसा होगा। निर्णीत ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ संख्या 7 की विषय-वस्तु को दोहराते हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 28 की विषय-वस्तु पुनः अस्पष्ट और संदिग्ध है, इसलिए अस्वीकार की जाती है। केवल स्पष्ट इनकार ही स्पष्ट स्वीकृति के बराबर है, इसलिए निर्णीत ऋणीगण द्वारा दायर आवेदन के पैराग्राफ संख्या 8 की विषय-वस्तु स्वीकार की जाती है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 29 की विषय-वस्तु उनकी आपत्तियाँ पूर्ववर्ती भागों में किए गए कथनों की पुनरावृत्ति मात्र है, हालाँकि वे पूरी तरह से अस्पष्ट और संदिग्ध हैं, इसलिए अस्वीकार की जाती हैं। डिक्रीदार के पास कोई वैध बचाव न होने के कारण वह इस बात के लिए अपने पक्ष को स्पष्ट करने में विफल रहा है कि सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत निहित प्रावधान कैसे और क्यों हस्तगत विवाद पर लागू नहीं होंगे, जिसके अभाव में, निर्णीत ऋणी आपत्तियों के उद्देश्य को समझने में भी असमर्थ हैं। निर्णीत ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ नंबर 9 की विषय वस्तु को दोहराते हैं। इसके अलावा, ऐसा प्रतीत होता है कि डिक्रीदार निर्णीत ऋणीगण द्वारा दाखिल आवेदन के वास्तविक अभिप्राय को समझने में विफल रहा है, जिसमें पैराग्राफ संख्या 9, 15, 19 और 20 के तहत निर्णीत ऋणीगण ने स्पष्ट रूप से कहा है कि अनुबंध और एवार्ड केवल तभी तक शून्य और अमान्य हैं जब तक यह डिक्रीदार से संबंधित है और केवल सोसायटी से

डिक्रीदार को अचल संपत्तियों पर कथित अन्तरण के अनुसरण में है। निर्णीत ऋणी स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करते हैं कि वे न तो सोसायटी के पक्ष में दी गई राहत के संबंध में लेनदेन या एवार्ड पर हमला करते हैं, न ही जहां तक यह खुद या बिल्डर से संबंधित है। विचाराधीन समझौता एक चतुर्पक्षीय समझौता है (आवेदन के पैराग्राफ संख्या 2 में गलती से 'त्रिपक्षीय' कहा गया है), जो प्रकृति में अलग करने योग्य है और स्वतंत्र रूप से इसका विरोध किया जा सकता है। इसलिए, डिक्रीदार निर्णीत ऋणीगण से उन लाभों को पूर्ववत करने की मांग नहीं कर सकता है जो उन्हें या समझौते के अन्य भागों के संबंध में सोसायटी या बिल्डर के साथ कोई समझौता नहीं किया गया, क्योंकि वे 1860 के अधिनियम की धारा 5-ए के अंतर्गत नहीं आते। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 30 की विषय-वस्तु तुच्छ, परेशान करने वाली और मात्र दोहराव है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि 1860 के अधिनियम की धारा 5-ए के अंतर्गत निहित प्रावधानों को केवल आवेदन को स्व-निहित बनाने और इसके वर्तमान अवलोकन के लिए उद्धृत किया गया है। इसके अलावा, सामान्य नियम सिविल के नियम 28 के अंतर्गत निहित प्रावधान प्रक्रियात्मक प्रकृति के हैं और न्याय के अधीन हैं, इसलिए आवेदन को अस्वीकार करने का आधार नहीं हो सकता। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 31 की विषय-वस्तु पूरी तरह से गलत है और यह डिक्रीदार के टालमटोल वाले आचरण को स्पष्ट करती है, जिसने मुकदमे के सभी चरणों में कपट की है और अब निराधार बचाव का सहारा ले रहा है, ताकि कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करके एक ऐसे कार्य की पुष्टि की जा सके जो स्पष्ट रूप से एक क़ानून द्वारा निषिद्ध है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि निर्णीत ऋणीगण को डिक्रीदार द्वारा किए गए कपट वाले कार्य को इंगित करके अपने मामले का बचाव करने का पूरा अधिकार है। किसी पक्ष को राहत देने से रोकने वाली कानूनी अक्षमताओं को समय-समय पर बचाव के रूप में अनुमति दी गई है, चाहे पीड़ित पक्ष द्वारा विरोध किया गया हो या नहीं। इसके अलावा, वर्तमान मामले में निर्णीत ऋणी वास्तव में पीड़ित हैं, क्योंकि वे अचल संपत्तियों के कब्जे में थे जिन्हें इस माननीय न्यायालय द्वारा अवैध रूप से सौंप दिया गया था, जो निर्णीत ऋणीगण के पक्ष में प्रतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी हैं। डिक्रीदार धारा 5-ए के तहत पूर्व अनुमोदन प्राप्त करने में विफल रहा है और इसे नवीनीकृत न करवाकर जानबूझकर सोसायटी को छोड़ दिया है, अब उसके पास संबंधित संपत्ति पर अपने अवैध कब्जे को कायम रखने का कोई अधिकार नहीं बचा है, इसलिए वह कानून के जनादेश को दरकिनार करने के लिए अति-तकनीकी तरीके अपना रहा है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 32 की विषय-वस्तु अस्पष्ट, तुच्छ और परेशान करने वाली है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। हालांकि, इस तथ्य की जानकारी के अभाव में अस्वीकार करना कि क्या धारा 5-ए के तहत पहले से मंजूरी ली गई थी, यह स्पष्ट करता है कि समझौते के खंड 6 में बताए गए अचल संपत्तियों के अन्तरण शून्य हैं और इसके आधार पर प्राप्त एवार्ड भी कानून की दृष्टि में शून्य है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 33 की विषय-वस्तु तुच्छ और पूरी तरह से गलत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। समझौते के खंड 6 में दिए गए अन्तरण न केवल सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के मद्देनजर शून्य है, बल्कि भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 23 के तहत भी स्पष्ट रूप से शून्य है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 34 और 35 की विषय-वस्तु स्पष्ट रूप से दोहरावपूर्ण है और अस्पष्ट, संदिग्ध और गलत भी है, इसलिए अस्वीकार किया जाता है। पूरी आपत्तियाँ अकादमिक और प्रतीकात्मक प्रकृति की हैं, बिना किसी स्पष्टीकरण के कि कैसे या धारा 5-ए के अंतर्गत निहित प्रावधान लागू क्यों नहीं हैं। निर्णीत ऋणी अपने आवेदन के पैराग्राफ संख्या 17 से 19 की विषय-वस्तु को स्पष्ट रूप से दोहराते हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 36 की विषय-वस्तु फिर से दोहराई गई है और आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 29 में भी इसी तरह की दलील दी गई है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। जवाब में, निर्णीत ऋणी इस जवाब के पैराग्राफ संख्या 17 की विषय-वस्तु के साथ-साथ अपने आवेदन के

पैराग्राफ संख्या 20 की विषय-वस्तु को दोहराते हैं। समझौता विच्छेदनीय है और लेन-देन और साथ ही एवार्ड केवल तभी तक शून्य है जब तक यह सोसाइटी द्वारा डिक्रीदार के पक्ष में किए गए अवैध अन्तरण से संबंधित है। निर्णीत ऋणीगण ने न तो डिक्रीदार को कोई अन्तरण किया है, न ही डिक्रीदार ने इमारत के निर्माण में योगदान दिया है या उन्हें कोई प्रतिफल दिया है। निर्णीत ऋणी केवल स्वयं और सोसाइटी के साथ-साथ, स्वयं और बिल्डर के बीच के लेन-देन में पक्षकार हैं। न तो सोसायटी और न ही बिल्डर ने निर्णीत ऋणीगण के खिलाफ वर्तमान निष्पादन वाद दायर किया है, जिसके कारण पृथक्करण के सिद्धांत के मद्देनजर निर्णीत ऋणी कोई भी लाभ वापस करने के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 37 की विषय-वस्तु प्रतीकात्मक, व्यक्तिगत, तुच्छ, दोहरावदार और स्पष्ट रूप से अस्पष्ट है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता। उत्तर के अंतर्गत पैराग्राफ की विषय-वस्तु का उत्तर इस उत्तर के पिछले भागों में पहले ही दिया जा चुका है। हालाँकि, दोहराव की कीमत पर, यह प्रस्तुत किया जाता है कि धारा 5-ए के तहत निहित प्रावधानों के गैर-अनुप्रयोग के लिए किए गए अस्पष्ट कथनों के कारण, निर्णीत ऋणी मौखिक तर्कों के समापन पर अपने लिखित तर्क दाखिल करने की अनुमति पाने के अधिकारी हैं। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 38 की विषय वस्तु फिर से दोहरावदार, अस्पष्ट, संदिग्ध, अवैध और परेशान करने वाली है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। हालांकि यह प्रस्तुत किया गया है कि यह सुशील कुमार मेहता बनाम गोबिंद राम वोहरा (मृत) द्वारा एलआर, (1990) 1 एससीसी 193; केनरा बैंक बनाम एनजी सुब्बाराय सेट्टी और अन्य (2018) 16 एससीसी 228; बिक्री कर आयुक्त बनाम सरजू प्रसाद राम कुमार (1976) 37 एसटीसी 533: 1972 एससीसी ऑनलाइन एससी 3 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय और माननीय उच्च न्यायालयों द्वारा निर्धारित किया गया है कि ऐसे अन्य कानून, कि जहां एवार्ड / डिक्री / लेनदेन को शून्य होने और अधिकार क्षेत्र की कमी से ग्रस्त होने के आधार पर आक्षेपित किया जाता है, कोई एस्टोपल या रेस-ज्युडिकेटा लागू नहीं होता है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 39 की विषय वस्तु अवैध और पूरी तरह से गलत है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। स्टाम्प ड्यूटी के मुद्दे को माननीय सर्वोच्च न्यायालय (2024) 6 एससीसी 1) द्वारा अधिकार क्षेत्र का मुद्दा घोषित किया गया है, इस पर माननीय उच्च न्यायालय द्वारा ए 227 संख्या 2511/2023 (संजय गुप्ता बनाम सुरेश कुमार मिश्रा और अन्य) में पारित निर्णय की घोषणा के बाद कानूनी स्थिति में बदलाव के कारण इस माननीय न्यायालय द्वारा बहुत अच्छी तरह से विचार किया जा सकता है। आपत्तियों के पैराग्राफ संख्या 40 और 41 की विषय-वस्तु अत्यंत अस्पष्ट होने के अलावा दोहरावदार, गलत, अवैध और परेशान करने वाली प्रकृति की भी है, इसलिए इसे अस्वीकार किया जाता है। डिक्रीदार अचल संपत्तियों का अधिकारी नहीं है क्योंकि सोसाइटी से उसका अधिकार, स्वत्व और स्वामित्व कभी भी उसे हस्तांतरित नहीं किया गया था, क्योंकि सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू.पी. अधिनियम संख्या 26, 1979) की धारा 5-ए के अनुसार विद्वान जिला न्यायाधीश की पूर्व स्वीकृति प्राप्त करने में विफल रहा। डिक्रीदार ने अचल संपत्तियों के साथ-साथ एवार्ड को कपट से प्राप्त किया है, इसलिए वह किसी भी तरह की छूट का अधिकारी नहीं है और उसे अपनी विफलता की पुष्टि करने के लिए कानूनी प्रक्रिया का उपयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। आवेदन के आरंभिक कथन से ही यह स्पष्ट है कि इसे इस माननीय न्यायालय के अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने के लिए दायर किया जा रहा है और इस प्रकार इस माननीय न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय के पास ऐसे मामले में अधिकार क्षेत्र की अंतर्निहित कमी या एवार्ड/डिक्री के निरर्थक होने पर किसी भी आपत्ति से निपटने के लिए पर्याप्त अधिकार क्षेत्र होगा। अन्य आपत्तियों के उत्तर इस उत्तर के पिछले भागों में पहले ही दिए जा चुके हैं। हालाँकि, यह एक बार फिर दोहराया जाता है कि समझौते के साथ-साथ एवार्ड को भी अलग-अलग माना जा रहा है, केवल इस हद तक कि यह सोसायटी और डिक्रीदार के बीच लेनदेन से संबंधित है और इस प्रकार के प्रावधानों में निहित प्रावधान समझौते में शामिल अन्य

10 लेन-देनों के संबंध में धारा 5-ए लागू नहीं होगी। उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 26/1979 की धारा 5-ए की उपधारा (2) के अंतर्गत माननीय जिला न्यायाधीश से पूर्व अनुमोदन प्राप्त न करने के प्रभाव और परिणाम का प्रावधान किया गया है। उपधारा यह प्रावधान करती है कि उपधारा (1) के अंतर्गत निहित प्रावधानों के उल्लंघन में किया गया कोई भी अन्तरण, अन्तरण को अमान्य कर देता है, जिससे वह शून्य हो जाता है, इसलिए यह अनिवार्य प्रकृति का है। इसलिए, माननीय जिला न्यायाधीश से किसी पूर्व अनुमोदन के अभाव में, डिक्रीदार (तृतीय पक्ष) के पक्ष में प्रगति शील शिक्षा समिति (द्वितीय पक्ष) की अचल संपत्ति में अविभाजित हिस्से का तथाकथित अन्तरण आरंभ से ही शून्य है। परिणामस्वरूप, उक्त शून्य लेनदेन से उत्पन्न मध्यस्थता का संदर्भ न केवल क्षेत्राधिकार से बाहर है, बल्कि धारा 5-ए के तहत निहित कानूनी रोक के प्रभाव को दरकिनार करते हुए और उसे शून्य करते हुए पारित किया गया एवार्ड भी अविधिक है। इस प्रकार, निष्पादन कार्यवाही शून्य है और एवार्ड के प्रवर्तन के लिए शुरू की गई है जो अंतर्निहित अधिकारिता के अभाव में पारित की गई है, इसे डिक्रीदार के खिलाफ हर्जे सहित खारिज किया जा सकता है।

9. निर्णीत ऋणी की ओर से अपने कथनों के समर्थन में निम्नलिखित विधि व्यवस्थाओं **Tulasi Ram Patodia v. State of U.P. and Others, 2015 SCC OnLine All 7621: (2015) 127 RD 731: (2015) 149 AIC 924: (2015) 109 ALR 783, Ramesh Chandra v. Shyamji Mishra, 2014 SCC OnLineAll 8875: (2015) 126 RD 294: (2014) 106 ALR 837: (2014) 143 AIC 954, Raj Kumar Gaba v. State of U.P., 2011 SCC OnLine All 2791: (2012) 49 VST 252, Rajnath Mishra v. The Xth Additional District Judge, Varanasi, 1991 SCC OnLine All 970 : 1991 All LJ 486 : (1991) 1 AWC 664 : 1991 RD 253, Krishan Lal v. State of J & K (1994) 4 SCC 422 : 1994 SCC (L&S) 885, Mannalal Khetan v. Kedar Nath Khetan (1977) 2 SCC 424 : AIR 1977 SC 536, Bahadur Singh Jain v. Munisubrat Dass Jain, 1968 SCC OnLine SC 128 : (1969) 2 SCR 432, Kiran Singh v. Chaman Paswan (1954) 1 SCC 710 : 1954 SCC OnLine SC 11, Hira Lal Patni v. Kali Nath, 1961 SCC OnLine SC 42 : (1962) 2 SCR 147 : AIR 1962 SC 199 : (1961) 2 SCJ 592, Sushil Kumar Mehta v. Gobind Ram Vohra (Dead) through his LRs. (1990) 1 SCC 193, Chiranjilal Shrilal Goenka v. Jasjit Singh (1993) 2 SCC 507, Ramlal Hargopal v. Kisanchandra and Others, 1923 ACC OnLine PC 46 : (1924) 19 LW 549 (PC), Govinddas Parameshwaridas (Full Bench), 1957, SCC OnLine MP 69 : ILR 1957, MP 223, Punjab State Civil Supplies v. Atwal Rice, (2017) 8 SCC 116 : (2017) 4 SCC (Civ) 20 : AIR 2017 SC 3756, Attar Singh v. District Judge, Jhansi, 1994 SCC OnLine All 61 : AIR 1994 All 295 : (1994) 23, ALR 494 : 1994 All LJ 995 : (1994) 1 AWC 655, K.K. Chari v. R.M. Seshadri (1973) 1 SCC 761 : (1973) 3 SCR 691 : AIR 1973 SC 1311, State of U.P. and Others v. Rajiv Gupta and Another (1994) 5 SCC 686, Roopa v. State of Rajasthan, 2000 SCC OnLine Raj 252 : (2000) 2 RLW 927 : (2000) 3 ICC 502, Ram Singh v. The Gandhar Agricultural Co-operative Service Society, Gandhar, 1974 SCC OnLine P7H 236 : AIR 1976 P&H 94 : 1984 RRR 415, Bijendra Kumar v. Pradeep Kumar 2014 SCC OnLine Del 2042, Haji Sk. Subhan v. Madhorao, 1961 SCC OnLine SC 200 : 1962 Supp (1) SCR 123 : (1962) 2 SCJ 575 : AIR 1962 SC 1230, Hasham Abbas Sayyad v. Usman Abbas Sayyad, (2007) 2 SCC 355 : 2006 SCC OnLine SC 1386, Commissioner of Sales Tax v. Sarjoo Prasad Ram Kumar (1976) 37 STC 533 : 1972 SCC OnLine SC 3, Arun Kr. Ghosh & Ors. v. State of West Bengal, 2001 SCC OnLine Cal 264 : (2001) 2 CHN 589 : (2001) 4 SLR 515 (Cal) : (2002) 4 LLJ (Supp)**

(NOC 960) 1498 : (2002) 1 CLR 564, Baby of Neesha v. State of Uttar Pradesh & Others, Habeas Corpus No. 51 of 2013, Harshad Chiman Lal Modi v. DLF Universal Ltd. And Another, (2005) 7 Supreme Court Cases 791, Ferozi Lal Jain v. Man Mal And Another, 1970 (3) Supreme Court Cases 181, Civil Appeal No. 302 of 1967, decided on March 11, 1970, M. Anasuya Devi and Another v. M. Manik Reddy and Others (2003) 8 SCC 565, Jitendra Mohan Malik v. Ravi Bhushan Malik, ILR (2009) I Delhi 282, Mathura Prasad Bajoo Jaiswal and Others v. Dossibai N. Jeejeebhoy, 1970 (1) SCC 613, Erach Boman Khavar v. Tukaram Shridhar Bhat and Another (2013) 15 SCC 655 पर न्यायालय का ध्यान आकृष्ट कराया गया। न्यायालय द्वारा माननीय न्यायालय की उक्त विधि व्यवस्थाओं का ससम्मान अवलोकन किया गया।

10. डिक्रीदार की ओर से अपने कथनों के समर्थन में निम्नलिखित विधि व्यवस्थाओं **2024 L.C.D. 2122, Shiv Kumar v. State of U.P. And Others, (2009) 2 SCC 337, Bharat Sanchar Nigam Ltd. v. Motorola India Pvt. Ltd., A.I.R., 1977 S.C., 1720, P. Chitharanja Menon v. Bal Krishnan and Others, (2022) 2 SCC 221, Acre Polymers Pvt. Ltd. v. Alphine Pharmaceuticals Ltd., 2007 L.C.D. 829, N. Khosla v. Raj Laxmi, (2022) 8 SCC 378, Central Bank of India v. Dragendra Singh Jadon, (2021) 6 SCC 418, Rahul S Shah v. Jitendra Kumar Gandhi, (2023) 2 SCC 481, Chopra Fabricators v Bharat Pumps, (2011) 8 SCC 161, Indian Council v. Union of India, (1991) 4 SCC 1 State of Punjab and Others v Gurdev Singh, (2003) 8 SCC 289, Ravindra Kaur v. Ashok Kumar and Another, Sabya Sachi Mukharji and K.N. Singh, AIR 1987, Supreme Court 1242, Civil Appeal No. 638 of 1980, Madhya Pradesh Rural Road Development Authority and Another v. L.G. Chaudhary Engineers and Contractors** पर न्यायालय का ध्यान आकृष्ट कराया गया। न्यायालय द्वारा माननीय न्यायालय की उक्त विधि व्यवस्थाओं का ससम्मान अवलोकन किया गया।

11. पत्रावली के अवलोकन से विदित होता है कि निर्णीत ऋणी की ओर से प्रार्थना पत्र सी-81 सम्पूर्ण निष्पादन कार्यवाही को खारिज करने के साथ-साथ डिक्रीदार के पक्ष में अवैध रूप से दी गई अचल सम्पत्तियों की बहाली हेतु इस आशय का प्रस्तुत किया गया है कि पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा-17(1) खण्ड-बी के अनुसार एवार्ड पर अपेक्षित स्टाम्प शुल्क का भुगतान न करने और एवार्ड को पंजीकृत न करवाने के कारण अचल सम्पत्ति की प्रकृति में या धन सम्बन्धी डिक्री की प्रकृति में दिया गया कोई भी अनुतोष इस न्यायालय द्वारा डिक्रीदार के पक्ष में कभी नहीं दिया जा सकता था। इसलिए न्यायहित में यह न केवल अनिवार्य है, बल्कि इस न्यायालय का कर्तव्य भी है कि वह बिना किसी वैध अधिकार के डिक्रीदार को कब्जे में दी गई अचल सम्पत्तियों को निर्णीत ऋणीगण को वापस दिलाए। उक्त के सम्बन्ध में पत्रावली के अवलोकन से विदित होता है कि स्टाम्प की कमी के सम्बन्ध में मुन्सरिम द्वारा उठाई गई आपत्ति को न्यायालय द्वारा दिनाँक 03.12.2020 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया और इसके अनुसरण में एवार्ड की प्रमाणित प्रति भी दाखिल की गई। दिनाँक 02.09.2021 को निर्णीत ऋणीगण की ओर से सी-28 स्वीकार्य एवार्ड के अभाव तथा स्टाम्प की कमी के कारण निष्पादन वाद को खारिज करने के लिए आवेदन दायर किया गया था, जिसे न्यायालय ने दिनाँक 17.10.2022 को उक्त आवेदन इस निर्देश के साथ खारिज कर दिया कि निर्णीत ऋणीगण को 15 दिनों के भीतर एवार्ड की पूरी राशि को जमा करना होगा, अन्यथा वसूली की प्रक्रिया शुरू की जाएगी। श्री संजय गुप्ता निर्णीत ऋणीगण में से एक ने धारा-47 सी०पी०सी० के तहत आपत्ति दायर की, जिसे न्यायालय ने दिनाँक 01.04.2023 को खारिज कर दिया, इसके बाद न्यायालय ने दिनाँक 08.05.2023 के आदेश द्वारा पुनः कुर्की वारन्ट जारी कर दिनाँक 28.05.2023 की तिथि नियत की। न्यायालय

द्वारा पारित आदेश दिनाँक 01.04.2023 के विरुद्ध निर्णीत ऋणीगण द्वारा अनुच्छेद 227 के तहत माननीय उच्च न्यायालय में याचिका दायर की गई, जिसे माननीय उच्च न्यायालय ने आदेश दिनाँक 05.07.2023 द्वारा आंशिक रूप से स्वीकार किया। माननीय उच्च न्यायालय के द्वारा पारित आदेश दिनाँक 05.07.2023 के अनुपालन में इस न्यायालय ने श्री संजय गुप्ता द्वारा उठायी गई आपत्ति को सुनवाई के बाद दिनाँक 01.11.2023 को खारिज कर दिया। तदुपरान्त न्यायालय द्वारा जारी किये गये एवार्ड में शामिल अचल सम्पत्तियों के कब्जे के लिए वारण्ट के अनुसार पुलिस बल की सहायता से कोर्ट अमीन ने दिनाँक 20.03.2024 को डिक्रीदार को कब्जा दिलाया। अब तक एवार्ड में शामिल अचल सम्पत्ति के सम्बन्ध में डिक्री निष्पादित की जा चुकी है, लेकिन उन्हें दी गई राशि का भुगतान निर्णीत ऋणीगण द्वारा न्यायालय के आदेश दिनाँक 17.10.2022, 06.12.2022 और 08.05.2023 के बावजूद नहीं किया गया है, जिसे माननीय उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया है। जहाँ तक निर्णीत ऋणीगण द्वारा लिए गए एवार्ड के पंजीकरण न करने के तर्क का सवाल है, उसे अपने स्वयं के आचरण से निर्णीत ऋणीगण ने धारा-11 के स्पष्टीकरण IV आदेश 2 के नियम 2 सी०पी०सी० के तहत इस तरह के तर्क लेने के अधिकार का अधित्यजन कर दिया है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनाँक 05.07.2023 और उसके अनुसरण में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनाँक 01.11.2023 के अनुपालन में अचल सम्पत्ति के बाबत एवार्ड निष्पादित किया गया है। जिसे निर्णीत ऋणीगण द्वारा चुनौती नहीं दी गई है और अभी भी बरकरार है। ऐसी स्थिति में निर्णीत ऋणी की ओर से प्रस्तुत प्रार्थना पत्र सी-81 स्वीकार किये जाने योग्य नहीं है।

12. जहाँ तक प्रार्थना पत्र सी-88 निर्णीत ऋणीगण द्वारा इस आधार पर निष्पादन वाद खारिज करने हेतु प्रस्तुत किया गया है कि दिनाँक 12.01.2007 का विवादित एवार्ड अधिकार क्षेत्र के बिना दिया गया था, दिनाँक 10.11.1996 के समझौते के आधार पर सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (यू०पी० अधिनियम सं० 26/1979 की धारा 5(A) के तहत निहित प्रावधानों का पालन करने मे विफलता के कारण शुरू से ही शून्य है, कानून की नजर में अमान्य है और इस न्यायालय द्वारा निष्पादित नहीं किया जा सकता है। पत्रावली पर उपलब्ध एवार्ड की छायाप्रति के अवलोकन से विदित होता है कि निर्णीत ऋणीगण द्वारा करार से सम्बन्धित मुद्दा माध्यस्थम कार्यवाही के दौरान उठाया गया था, जिसे विद्वान मध्यस्थ द्वारा तय किया जा चुका है। विद्वान मध्यस्थ द्वारा पारित उक्त एवार्ड को धारा-34, माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 के तहत चुनौती दी गयी, जिसे माननीय जनपद न्यायाधीश, लखनऊ द्वारा दिनाँक 25.07.2012 को खारिज कर दिया गया, जिसके विरुद्ध धारा-37 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 में माननीय उच्च न्यायालय में निर्णीत ऋणीगण द्वारा अपील दाखिल की गई, जिसे माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दिनाँक 30.01.2017 को खारिज किया जा चुका है। ऐसी स्थिति में निर्णीत ऋणी माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 16 व 4 तथा सी०पी०सी० की धारा-11 के स्पष्टीकरण IV एवं आदेश 2 नियम 2 के तहत किये गये प्रावधानों के विरुद्ध है और अपने स्वयं के आचरण से निर्णीत ऋणीगण ने ऐसा अभिवचन लेने के अपने अधिकार का अधित्यजन कर दिया है। इसके अतिरिक्त माननीय जिला जज, लखनऊ द्वारा R.S. 22/1998, शिक्षा समिति व R.S. 23/1998 डिक्रीदार, सुरेश कुमार मिश्रा की ओर से दाखिल की गई याचिका अन्तर्गत धारा-9, माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 में पारित आदेश दिनांकित 27.08.1999 द्वारा सम्पूर्ण प्रथम तल एवं ऊपरी तल के सामने का आधा भाग तथा द्वितीय तल के उत्तरी ब्लॉक में करार में उल्लिखित पक्षकार सं० 2 व 3 के अधिकार को विक्रय, बुकिंग, अंतरित या किसी अन्य तरीके से, नए अधिकारों का सृजन स्वत्व अथवा हित किसी बाहरी व्यक्ति को करने से स्वामी व बिल्डर्स को निषेधित किया गया है। जहाँ तक निर्णीत ऋणी की ओर से प्रस्तुत विधि व्यवस्थाओं का प्रश्न है, प्रस्ततु मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों से भिन्न होने के

कारण प्रस्तुत मामले में लागू नहीं होती हैं। ऐसी स्थिति में निर्णीत ऋणी की ओर से प्रस्तुत प्रार्थना पत्र सी-88 स्वीकार किये जाने योग्य नहीं है।

आदेश

निर्णीत ऋणी की ओर से प्रस्तुत प्रार्थना पत्र सी-81 व सी-88 निरस्त किया जाता है। पत्रावली वास्ते सुनवाई प्रार्थना पत्र सी-99 दिनाँक 26.05.2025 को पेश हो।

पीठासीन अधिकारी,
कॉमर्शियल कोर्ट नं०-2,
लखनऊ।

Digitally signed by RAM PRAKASH PANDEY
Date: 2025.05.16 15:45:59 IST
Reason: Document Owner
Location: Commercial Court No.2, Lucknow.